भारतीय इतिहास के स्रोत सिक्के

6902
Gen? Dev
RAM

VI-59
6902
Gen > Dev.
RAM

BASTHI PUNDALIKA SHENOY
ASHOKNAGAR. MANGALORE-6.



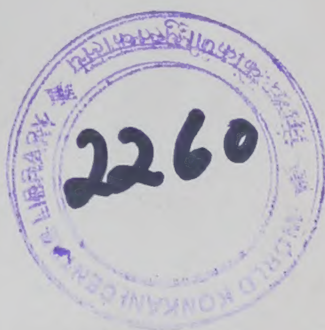
BASTHI PUNDALIK SHENOY,
URVA CHILIMBI:
MANGALORE-575006.

BASTHI PUNDALIKA SHENOY
ASHOKNAGAR, MANGALORE-6

॥ श्रीः ॥

विद्याभवन राष्ट्रभाषा ग्रन्थमाला
१००

भारतीय इतिहास के स्रोत
सिक्के



मूल लेखक
इ० जे० रैपसन

अनुवादक
डा० रामकुमार राय

BASTHI PUNDALIK SHENOY
URVA CHILIMBI:
MANGALORE-575006.



चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी-१
१९६६

INDIAN COINS

By

E. J. RAPSON

STRASSBURG

VERLAG VON KARL J. TRUBNER

THE

VIDYABHAWAN RASHTRABHASHA GRANTHAMALA

100

****

Sources of Indian History :

COINS

By

E. J. RAPSON

Hindi Translation

By

DR. RAMKUMAR RAI

SHENOY
KHALA MANGALORE-6

THE

CHOWKHAMBA VIDYABHAWAN, VARANASI-1

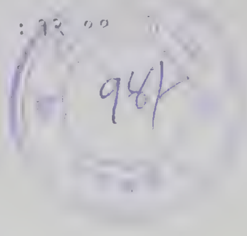
Rs 12-00] [1966

प्रकाशक : चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी-१

मुद्रक : विद्याविलास प्रेस, वाराणसी-१

संस्करण : प्रथम, वि० संवत् २०२२

मूल्य : १२ ००



The Chowkhamba Vidya Bhawan

Post Box 69, Chowk, Varanasi-1 (India)

Phone : 3076

Also can be had of

THE CHOWKHAMBA SANSKRIT SERIES OFFICE

Publishers & Antiquarian Book-Sellers

P. O. Chowkhamba, Post Box 8, Varanasi-1 (India)

Phone : 3145

The First Hindi Translation published by arrangements with Walter De Gruyter & Co., Berlin.

BASTHI PUNDALIKA SHENOY,
URVA CHILIMBI,
MANGALORE-575006.

भूमिका

रैपसन का प्रस्तुत ग्रन्थ भारतीय मुद्राशास्त्र के क्षेत्र में अपना एक विशिष्ट स्थान रखता है। रैपसन उन कुछ आरम्भिक पाश्चात्य इतिहासकारों में एक थे जिन्होंने वस्तुतः भारतीय इतिहास के अध्ययन-अनुसन्धान को वह वैज्ञानिक रूप प्रदान किया जो आज हमें उपलब्ध है। फिर भी, इतना महत्वपूर्ण होते हुये भी, अंग्रेजी में यह ग्रन्थ अनेक वर्षों से अप्राप्य था यद्यपि विद्वानों को इसकी सतत आवश्यकता पड़ती रही। इसी कमी को पूरा करने की दृष्टि से हम इसका हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत कर रहे हैं जिससे यह और अधिक उपयोगी सिद्ध हो।

अनुवाद में कुछ त्रुटियाँ हो सकती हैं, परन्तु आशा है विज्ञ पाठक उसके लिये मुझे क्षमा करेंगे। यूनानी तथा अन्य नामों के हिन्दी उच्चारण को लिपिबद्ध करने पर भी कुछ मतभेद हो सकता है; परन्तु मैंने यथा-साध्य मूल नामों का ध्वन्यात्मक साम्यता के आधार पर हिन्दीकरण किया है जो कहीं-कहीं उनके शुद्ध अंग्रेजी रूप के अनुवाद से भिन्न प्रतीत होगा। यों यह भी ध्यान रक्खा है कि इन नामों का वही रूप ग्रहण करूँ जो आज हिन्दी पुस्तकों में प्रचलित है। इस प्रकार, कुछ अपवादों के अतिरिक्त शायद इस दृष्टि से मेरे अनूदित नामों के रूप में प्रचलन से अधिक विचलन न मिले। फिर भी, यदि कहीं कोई बात खटकने की हो तो मैं उसके सम्बन्ध में किसी भी परामर्श का स्वागत करूँगा।

अनुवादक

BASTHI PUNDALIKA SH
UR' . CHILI E
MANGALORE-575

संक्षेप-सूची

अग्र. = *obverse.*

ऑ. = OLDENBERG.

आवेई. = Archaeological Survey of Western India.

इकासइ. = ELLOT: Coins of Southern India.

इम्यूकै. = Indian Museum Catalogue.

ईऐ. = Indian Antiquary.

एइ. = Epigraphia Indica.

एऐ. = Ariana Antiqua.

एरि. = Asiatic Researches.

क. = CUNNINGHAM; **आसरि.** = Archaeological Survey Reports; **काऐइ.** = Coin of Ancient India; **कामेइ.** = Mediaeval India; **ऐज्या.** = Geography of India.

काइइ. = CII; Corpus Inscriptionum Indicarum.

गा. = GARDNER; or GARDNER, British Museum Catalogue of Greek and Scythic Kings of India.

गुई. = A. VON GUTSCHMID, Geschichte Irans.

जए. = Journal Asiatique.

जएसो. = Journal of the Royal Asiatic Society.

जजसो. = Journal of the Royal Geographical Society.

जबंसो. = Journal of the Bengal Asiatic Society.

जबाएसो. = Journal of the Bombay Branch of the Royal Asiatic Society.

जमसो. = Journal of the Madras Literary Society.

ट्राका. = Transaction of the International Congress of Orientalists.

ड्र. ए. = DROUIN; HE. = Memoire sur les Huns Ephthalites.

त्सीगे. = Zeitschrift der Deutschen Morgenlandischen Gesellschaft.

त्सीन्यू. = Zeitschrift fur Numismatik.

थॉ. = THOMAS; ऐइवे. = Ancient Indian Weights.

न्यूक्रा. = Numismatic Chronicle.

पृष्ठ. = *reverse.*

प्रिए. = PRINSEP'S Essays ed. THOMAS.

प्रो.बंएसो. = Proceeding of the Royal Asiatic Society of Bengal.

बाग. = Bombay Gazetteer.

ब्रिकै. = British Museum Catalogue.

भ. = BHAGVĀNLĀL INDRJĪ.

भअडे. = BHAṆḌĀRKAR; His Dek = Early History of the Dekken.

रिडे. = RHYS DAV.DS; ऐक्रासी. = Ancient Coins of Ceylon.

लइ. = LASSEN : Indische Altertumskunde.

वीमा. = Wiener Zeitschrift fur die Kunde des Morgenlandes, or Vienna Oriental Journal.

सेबुई. = Sacred Books of the East.

विषय-सूची

भारतीय इतिहास के स्रोत

सिक्के

१. प्रस्तावना

§ *१. प्रस्तुत कृति की सीमायें* :—प्राचीन ओर मध्यकालीन भारत के समस्त ज्ञात सिक्कों का ऐतिहासिक दृष्टिकोण से विवरण प्रस्तुत करना ही प्रस्तुत कृति का उद्देश्य है। प्राचीनतमकाल से आरम्भ करके निम्न तथ्यों के आधार पर प्रत्येक दशा में कालनिर्धारण किया गया है। सामान्य रूप से उत्तर भारतीय राज्यों और दक्षिण भारत के उन राज्यों की दशा में भी जो कृष्णा नदी के उत्तर में स्थित हैं, हमारा प्रतिपाद्य विषय स्वभावतः उन सुनिश्चित सीमाओं में आबद्ध है जो नियमित रूप से ११०० ई० से १३१० ई० की अवधि के बीच मुसलिम विजय के विकास के फलस्वरूप मुसलिम मुद्राशैली के आरम्भ द्वारा उपलब्ध होती है। सुदूर दक्षिण में, जहाँ मुसलिम प्रभुत्व कभी भी सार्वभौम नहीं हो सका, और परिणामस्वरूप सिक्कों की क्रमिकता में कोई व्यवधान नहीं आ सका, हमारा पर्यवेक्षण १३२६ ई० में विजयनगर के साम्राज्य के अभ्युदय तक सीमित रहेगा।

फिर भी, इन सीमाओं के बाहर भी ऐसे किसी उल्लेखनीय उदाहरण का सन्दर्भ-संकेत किया जायगा जहाँ किसी विशेष कारण, जैसे किसी राज्य की दुर्गमता या पृथक्त्व के फलस्वरूप आरम्भिक मुद्रा-शैली का ही बाद के समय तक प्रचलन बना रहा।

§ *२. वर्गीकरण* :—इस प्रकार परिभाषित प्राचीन और मध्यकालीन भारत के सिक्के, स्वाभाविक रूप से, तीन प्रमुख वर्गों के अन्तर्गत विभाजित हैं:—(१) पूर्वंग देशीय सिक्के, जो, जहाँ तक हम वर्तमान ज्ञान के आधार पर निर्णय कर सकते हैं, सम्पूर्ण भारत तथा लङ्का में भी व्यापक रूप से व्यवहृत प्रतीत होते हैं; और इसी तथ्य का अनुसरण करते हुए मुद्राशास्त्रियों द्वारा निर्धारित (२) उत्तरी, तथा (३) दक्षिणी नामक दो अन्य वर्ग। ये पारिभाषिक शब्द सर्वथा उपयुक्त नहीं कहे जा

सकते क्योंकि इस सम्बन्ध में कोई विशुद्ध भौगोलिक वर्गीकरण प्रायः असम्भव है। इन वर्गों का वास्तविक विभेद विदेशी आक्रमणों के अस्त-व्यस्तताजन्य प्रभाव पर आधारित है; और जहाँ यह सत्य है कि इस विदेशी प्रभाव के समस्त क्रम ने भारत के उत्तर-पश्चिमी कोने को ही सर्वप्रथम आक्रान्त किया, वहीं यह सामन रूप से सत्य है कि इस प्रकार के प्रभाव की अधिकांश शक्ति न केवल दक्षिण पहुँचने के पूर्व वरन् मध्य अथवा उत्तर पूर्व के क्षेत्रों तक पहुँचने के पूर्व ही समाप्त हो गई। दूसरी ओर, उत्तर के साथ सम्पर्क ने दक्षिण के कुछ राज्यों, जैसे आन्ध्र की मुद्रा शैली, को उत्तर के सिक्कों की कुछ सामान्य विशिष्टताओं से युक्त कर दिया। अतः मुद्राशास्त्रीय आशय में 'उत्तरी' शब्द को भारतीय सिक्कों के उस वर्ग का द्योतक मानना चाहिये जिसकी पूर्वंग देशीय सिक्का-शैली विदेशी प्रभाव से अत्यधिक परिमार्जित हो गई; और दक्षिणी शब्द को उस वर्ग का द्योतक जिसमें अधिकांशतः एक स्वतन्त्र और विशिष्टतः भारतीय विकास के चिह्न लक्षित होते हैं।

§ ३. *साहित्य* :—भारतीय मुद्राशास्त्र की विभिन्न शाखाओं से सम्बद्ध कुछ प्रामाणिक कृतियों के नाम इस प्रकार हैं। इनके अतिरिक्त अन्य सन्दर्भ प्रत्येक अनुच्छेद के अन्त में दे दिये गये हैं :—

(१) यूनानी-बैक्ट्रियन और सामान्य रूप से भारतीय :—H. H. Wilson, Ariana Antiqua, 1841; J. Prinsep, Essays on Indian Antiquities (मूलतः J. B. A. 1832–38, में प्रकाशित), E. Thomas, 1858, द्वारा सम्पादित और संवर्धित।

(२) यूनानी-बैक्ट्रियन, यूनानी-भारतीय और आरम्भिक-सीथिक :—A. Cunningham, Coins of Alexander's Successors in the East, 1873 (=NChr. 1868, pp, 93. 181. 257; 1869, pp. 28. 121. 217. 293; 1870, pp. 65. 205; 1872, p. 157; 1873, p. 187); A von Sallet, Nachfolger Alexander d. Gr. in Baktrien und Indian, 1883 (= ZfN. 1879, pp. 165. 271; 1880, p. 296; 1881, pp. 109. 279; 1882, p. 158; 1883, p. 156). इस विषय पर पहले की कृतियों की सूची के लिए देखिए

पृ० ७९ (=ZfN. 1879, p. 283), और PE. II, p. 172, note; P. Gardner, Catalogue of Indian Coins in the British Museum; Greek and Scythic Kings of Bactria and India, 1886; G. Buhler, Kharosthi Inscriptions on Indo-Grecian Coins, WZKM. VIII, p. 193.

(३) भारतीय-सिथिक :—E. Drouin, Chronologie et Numismatique des Rois Indo-Scythes, 1888 (=Rev. Num. pp. 8. 185); A. Cunningham, Coins of the Indo-Scythians (अर्थात् शक और कुषाण), 1892 (=NChr, 1888, p. 199; 1889, p. 268; 1890, p. 103; 1892, pp. 40. 98); id., Coins of the Later Indo-Scythians, (अर्थात् बाद के महान् कुषाण, सीथो-ससेनियन, छोटे कुषाण, और एपथेलिटीज अथवा श्वेत हूण) 1894 (=NChr. 1893, pp. 93. 166. 184; 1894, P. 243), Resume by V. A. Smith, JBA, 1894, p. 179; E. Drouin, Monnaies des Grands Kouchans (अर्थात् कनिंघम के सीथो-ससेनियन) Rev. Num. 1896, p. 154.

(४) देशीय राज्य :—E. Thomas, Ancient Indian Weigths, 1874 (= International Numismata Orientalia, I, Part I); A. Cunningham, Coins of Ancient India, 1891; id., Coins of Mediaeval India, 1894; Bhagvanlal Indraji, Coins of the Western Ksatrapas (ed. Rapson), JRAS. 1890, p. 639; V. A. Smith, Coinage of the Early or Imperial Gupta Dynasty of Northern India, JRAS. 1889, p. I; id., Observations on the Gupta Period, JBA. 1894, p. 164.

(५) दक्षिण भारत :—W. Elliot, Coins of Southern India, 1886 (=International Numismata Orientalia, III, Part 2).

(६) लङ्का :—T. W. Rhys Davids, Ancient Coins and Measures of Ceylon, 1877 (= International Numismata Orientalia I, Part 6).

२. प्राचीनतम देशी सिक्के

§ ४. *मानक, और प्रचलन का समय :*—भारत की प्राचीनतम सिक्का प्रणाली, जो किसी भी विदेशी प्रभाव के बिना ही स्वतन्त्र रूप से विकसित प्रतीत होती है, मनु ८. १३२ और बाद में, दी गई तौल की देशी पद्धति का अनुसरण करती है। इस पद्धति का आधार 'रत्ती' (रक्तिका), अथवा 'गुञ्जिका' है जिसके वजन का १.८६ ग्रेन =.११८ ग्राम के लगभग अनुमान किया गया है। सोने के मानक सिक्के, ८० रत्ती के 'सुवर्ण' = १४६.४ ग्रेन अथवा ९.४८ ग्राम, का कोई भी नमूना ज्ञात नहीं है; किन्तु चाँदी के ३२ रत्ती के पुराण या धरण = ५८.५६ ग्रेन अथवा ३.७९ ग्राम, तथा ताँबे के ८० रत्ती के कार्षापण (सुवर्ण के समान वजन के) और इनके विभिन्न गुणज तथा उपविभाग के भारत के प्रायः प्रत्येक भाग में अनेक नमूने उपलब्ध हुए हैं।

यहाँ दिया गया रत्ती के वजन का अनुमान कनिंघम का है : काऐइ. पृ० ४४। अन्य अनुमानों के लिये देखिये थॉ, ऐइवे., पृ० ६५; स्मिथ, प्रो० बंएसो., १८८७, पृ० २२२, और जएसो. १८८९, पृ० ४२। देशी तौल का सम्पूर्ण पद्धति के लिये देखिये क. आसरि. १०, ७८; १४, १७; और थॉ. ऐइवे. पृ० १३। तु० की० एरि. ५ (१७९८), पृ० ९१; जबंसो. १८३८, पृ० ८९२; १८६४, पृ० २५१; १८६५, पृ० १४. ४६. ५१।

इस सिक्के के प्राचीनतम नमूने का समय कम से कम चतुर्थ शताब्दी ई० पू० के लगभग हो सकता है।

क. आसरि. १, पृ० ७०; २, पृ० २२९. २६४, २८८; १४, पृ० १७; क. न्यूक्रा. १८७३, पृ० २०९; क. काऐइ. पृ० ५२; थॉ. ऐइवे. पृ० ३३; रिडे. ऐक्रासी. पृ० १, परिणामों का सारांश, पृ० १३, § २२; रैप्सन, जएसो. १८९५, पृ० ८६९।

द्वितीय शताब्दी ई० पू० के आरम्भिक चरण में आकर बसनेवाले यूनानियों के प्रभाव ने उत्तर पश्चिम में इस सिक्का प्रणाली में बहुत परिमार्जन कर दिया; किन्तु भारत के अन्य भागों में वही पूर्वग सिक्का प्रणाली कुछ शताब्दियों बाद तक चलती रही (थॉ. ऐइवे. पृ. ५७)।

§ ५. *सिक्के के आकार* :—इन सिक्कों का आकार प्रायः चौकोर या आयताकार है। चाँदी के सिक्के नियमित रूप से धातु की चपटी चादर के, तथा ताँबे के सिक्के छड़ से काट कर बनाये गये हैं। (ये प्राचीन सिक्के धातु की तौलों के अतिरिक्त कदाचित ही कुछ और कहे जा सकते हैं, और इन पर समय-समय पर इनकी शुद्धता तथा प्रामाणिकता के लिये उत्तरदायी अधिकारियों के चिह्न 'पञ्च' द्वारा लगा दिये जाते थे। इस प्रकार चिह्नों के लगाने की विधि के प्रयोग के कारण ही ये 'पञ्चमार्क (आहत) सिक्कों के नाम से प्रसिद्ध हैं (**फलक** १, १)।

क. काऐइ. पृ० ४२, फलक १, १–२३; क. आसरि. ६, २१३; थॉ. ऐइवे. पृ० ५७; कलेक्शन ऑफ सिम्बल्स, थियोबाल्ड, जबंसो, १८९०, पृ० १८१ (आलोचना, रेव्यू. १८९२, पृ० ९१); १८९४, पृ० ७३। तु० कीं० एऐ. पृ० ४०३; जबाएसो. १०, पृ० २१।

§ ६. *गिल्ड टोकेन्स* :—वे सिक्के (**फलक** १, २) भी इसी काल के हैं जिन्हें बूहलर ने 'गिल्ड टोकेन्स' नाम दिया है (इण्डियन स्टडीज़ III², पृ० ४९; क. काऐइ पृ० ६३, फलक ३, ८–१२)। ढले ताँबे के सिक्के भी, जो इन्हीं के समान किसी भी विदेशी प्रभाव से अपरिमार्जित किसी प्राचीन और सर्वथा भारतीय लिपि या कलात्मक आकृतियों से अङ्कित हैं, अपेक्षाकृत थोड़े बाद के समय के हैं (उदाहरण के लिए देखिए क. काऐइ. फलक २. २१. २२)।

तु० कीं० क. काऐइ. पृ० ५९, **फलक** १, २४–२९; प्रिए. १, पृ० २१४; थॉ. ऐइवे. पृ० ५५।

३. भारत के आरम्भिक विदेशी सिक्के

§ ७. *आरम्भिक इरानी सिक्के* :—अकामेनिड (Achaemenid) के शासन-काल (५००-३३१ ई० पू०) में पर्शियन सिक्के पंजाब में चलने लगे थे। सोने के Double staters (**फलक** १, ५) वास्तव में चतुर्थ शताब्दी ई० पू० के उत्तरार्द्ध में भारत में ही बनाये जाते थे (व० पृ० ११. २०. १६, फलक २, १६-१९, और २७)। साथ ही

चांदी के अनेक सिग्लोस (ईरानी सिक्के) पर देशी पञ्चमार्क के समान ही ऐसे चिह्न बने हैं जो इस सम्भावना को उत्पन्न करते प्रतीत होते हैं कि दोनों ही वर्ग के सिक्कों का एक साथ ही प्रचलन था (**फलक** १, ३)। सिग्लोस पर ऐसे अक्षरों की उपस्थिति से, जिन्हें ब्राह्मी और खरोष्ठी अक्षरों के रूप में पढ़ा गया है, यह सम्भावना और बढ़ जाती है (**फलक** १, ४)।

बूहलर, इण्डियन स्टडीज़ III[2], पृ० ११३; रैपसन जएसो. १८९५, पृ० ८६५। ब. पृ० ११, इन परवर्ती चिह्नों को एशिया के अन्य प्रान्तों में लगा मानते हैं।

§ ८. *आरम्भिक ईरानी मानक* :—पंजाब में एक ऐसी तौल-पद्धति की स्थापना को, जो प्रत्यक्षतः ईरान से गृहीत प्रतीत होती है (सिग्लोस = ८६.४५ ग्रेन अथवा ५.६०१ ग्राम), सम्भवतः ईरानी आधिपत्य का परिणाम मानना चाहिये। यही ईरानी तौल-पद्धति बाद में प्रायः समस्त यूनानी राजाओं के सिक्कों के लिये भी व्यवहृत होने लगी।

गा. पृ० LXVIII; क. न्यूक्रा. १८८८, पृ० २१६, मानक के इस परिवर्तन की सोने और चाँदी के सापेक्षिक मूल्य में परिवर्तन के रूप में व्याख्या करते हैं; फान साले भी, त्सीन्यू. १८७९, पृ० १९३, इस नवीन मानक को ऐटिक (Attic) स्रोत से निष्कृष्ट मानते हैं।

§ ९. *एथेनियन सिक्के* :—प्राचीन समय से ही व्यापार के दौरान में एथेन्स के 'उलूक' पूर्व के देशों में आने लगे; और जब एथेन्स की टकसालों का उत्पादन अपेक्षाकृत कम हो गया (अर्थात्, ३२२ ई० पू० के पहले प्रायः एक शताब्दी तक, जब टकसाल बन्द रही) तो उत्तर भारत में ही इनके समान अनुकृति के सिक्के बनाये गये। इनमें से कुछ तो केवल मूल सिक्कों को ही यथावत बनाने के प्रयास हैं (**फलक** १, ६); किन्तु अन्य में, जो कदाचित कुछ बाद के समय के हैं, पृष्ठ भाग पर 'उलूक' के स्थान पर गरुड़ को प्रतिष्ठित कर दिया गया है (**फलक** १, ७)। इसी बाद के वर्ग से सोफीटीज़ के (देखिये आगे § ११), जो सिकन्दर के आक्रमण के समय एसेसिनीज़

(Acesines) के तटवर्ती एक जनपद पर शासन करता था, सिक्कों का स्वरूप गृहीत हुआ प्रतीत होता है (फलक १, ८)।

हेकै. पृ० XXXI. XXXII, एथेन्स, नंबर २६७-२७६ª, फलक ७, ३-१०; गार्डनर, न्यूक्रा. १८८०, पृ० १९१, फलक १०, ५. ६। देखिये क. न्यूक्रा. १८६६, पृ० २२०; गार्डनर, पृ० XIX, भी।

ALEXANDROU = γ.

§ १०. *सिकन्दर के सिक्के* :—यह सम्भव है कि *ΑΛΕΞΑΝΔΡΟΥ* नाम से युक्त चौकोर भारतीय आकार के ताँबे के सिक्के सिकन्दर महान ने भारत में बनवाये हों।

गार्डनर, पृ० XVIII। डानेनबर्गने, जिन्होंने सर्वप्रथम इन सिक्कों को देखा, इन्हें बैक्ट्रिया का माना, फान साले : त्सीन्यू. १८७९, पृ० २८५, फलक ४, १।

§ ११. *सेल्यूकस के साम्राज्य के साथ भारतीय सम्बन्ध* :—सेल्यूकस के पूर्वी अभियान तथा चन्द्रगुप्त के साथ ३०६ ई० पू० के लगभग उसकी सन्धि (ऐसी., पृ० ५५) के समय के बाद से सेल्यूकस के सीरिया के साम्राज्य तथा उत्तर भारत के मौर्य साम्राज्य के बीच नियमित संसर्ग आरम्भ हो गया, जो मेगास्थनीज़ तथा डेमेकस (Daimachus) के अधीन पाटलीपुत्र के राजदरबार में स्थापित सेल्यूकस के दूतावासों तथा अशोक के शिलालेखों (लइ० II, पृ० २४१) में यूनानी राजाओं के उल्लेख से स्पष्ट है। सेल्यूकस के सिक्कों पर हाथी की अनुकृति का ग्रहण किया जाना, और सेल्यूकस के (उदाहरण के लिये बराँ, फलक १, १५) तथा सोफीटीज़ (Sophytes) के कुछ सिक्कों की परस्पर समानता निःसन्देह इसी संसर्ग का परिणाम है।

सामान्यतः ऐसा माना गया है (उदाहरण के लिये देखिये गार्डनर, पृ० XX) कि सोफीटीज़ के सिक्के सेल्यूकस के सिक्कों के अनुकरण हैं; किन्तु स्थिति इसके विपरीत भी रही हो सकती है, अथवा, सम्भवतः ये दोनों ही किसी एक दूसरे मूलरूप—भारत

में बने एथेनियन सिक्कों के अनुकरण—से निष्कृष्ट हो सकते हैं (देखिये ऊपर § ९)। सोफीटीज के लिये देखिये क. जवंसो. १८६५, पृ० ४६; न्यूक्रा. १८६६, पृ० २२०; ऐज्या. पृ० १५७; फान साले, त्सीन्यू. १८७९, पृ० २८५, फलक ४. २; गार्डनर, पृ० XIX, २, फलक १, ३; सिलवन लेवी. जए. १८९० (XV), पृ० २३७। देखिये न्यूक्रा. १८९३, पृ० १०१; प्रो. वंएसो. १८६७, पृ० १०६; रेन्यू. १८९०, पृ० ४९६; त्सीन्यू. १८८३, पृ० २, फलक १, १ भी।

§ *१२. यूनानी-बैक्ट्रियन प्रभाव* :—किन्तु द्वितीय शताब्दी ई० पू० के आरम्भ के पूर्व भारत के देशी सिक्कों का किसी विदेशी प्रभाव के कारण कोई व्यापक परिवर्तन नहीं हो सका। दियोदतस (फलक १, ९), जिसने २४८ ई० पू० के लगभग सेल्यूकस-सामाज्य के उत्तराधिकारी शासक ऐन्टियोकस द्वितीय के विरुद्ध विद्रोह कर दिया, द्वारा बैक्ट्रिया में स्थापित साम्राज्य का ही अनन्ततः वह प्रभाव पड़ा जिसने उत्तर-पश्चिम भारत की सिक्का-प्रणाली के रूप और प्रकृति को सर्वथा परिवर्तित कर दिया (देखिये आगे § १८) ।

§ *१३. पार्थियनों का प्रभाव* :—पार्थियन विशिष्टता, जो निःसन्देह बैक्ट्रिया में पार्थियों और शकों के सम्पर्क का परिणाम है, भारत के शक सिक्कों में भी उपलब्ध है। इनके प्राचीनतम उदाहरण—मौस (Maues)— द्वितीय शताब्दी ई० पू० के उत्तरार्द्ध के हैं (देखिये आगे § २९)। वोनोनस (Vonones) राजवंश की, जिसका प्रथम शताब्दी ई० पू० में मौस के उत्तराधिकारियों पर आधिपत्य प्रतीत होता है, उत्पत्ति बहुत सम्भवतः पार्थियन है (देखिये आगे § ३०)। बाद का ईसा की प्रथम शताब्दी का गोन्डोफेरस (Gondophares) राजवंश निश्चित रूप से पार्थियन है (देखिये आगे § ६१)।

§ *१४. रोमन* :—साम्राज्य की स्थापना के आरम्भ तथा उसके बाद के सिक्के उत्तर और दक्षिण भारत के अनेक भागों में अत्यधिक संख्या में मिलते हैं (देखिये आगे §§ ६९, १२३)।

एरि. II (१७९०),पृ० ३३१; क. आसरि. II, पृ० १६२; XIII. पृ० ७२; जबंसो I. (१८ ३२), पृ० ३९२, ४७६; १८३४, पृ० ५६२, ६३५; १८५१ पृ० ३७१; प्रो. बंएसो १८७९, पृ० ७७. १२२. २०५. २१०; १८८०, पृ० ११८; १८८६. पृ० ८६; न्यूक्रा. १८४३(५); पृ० २०२; १८४३ (६), पृ० १११. १६०; १८९१, पृ० १९९; प्रिए. I, पृ० १४८।

§ *१५. रोमन प्रभाव :*—भारतीय मुद्रानीति पर रोमन प्रभाव के सम्बन्ध में दो बातें स्पष्ट प्रतीत होती हैं :—(१) 'कुजुल-कदफेस' (Kozola Kadaphes) नाम से युक्त कुषाण ताँबे के सिक्कों का शीर्ष ऑगस्टस के शीर्ष का प्रत्यक्ष अनुकरण है (देखिये आगे § ६६); (२) कुषाणों के सोने के सिक्के एक ऐसे तौल-मानक का अनुसरण करते हैं जो रोमनों के समान है (देखिये आगे § ७०)।

§ *१६. ससेनियन प्रभाव :*—३०० से ४५० ई० के बीच की अवधि में ईरान के ससेनियन शासकों तथा काबुल के कुषाण राज्य के परस्पर संसर्ग का सिक्कों के एक ऐसे वर्ग से प्रमाण मिलता है जो ओक्सस (Oxus) क्षेत्र में बने और शक-ससेनियन के नाम से विख्यात हैं। इस वर्ग के सिक्कों का कालक्रम की दृष्टि से अत्यन्त महत्व है क्योंकि उनमें से अधिकांश को उन विभिन्न ससेनियन शासकों के समय का कहा जा सकता है जो उक्त अवधि-सीमा के बीच शासन करते थे (देखिये आगे §७५)। वरह्रान ५ के शासनकाल (४२० से ४३८) में भारत और ईरान के बीच परस्पर सम्बन्ध के और भी प्रमाण हैं (ड्र. ए. पृ० २४, म्यूजियोन १८९५ से)। किन्तु ससेनियन सिक्कों का भारत में सर्वाधिक प्रभाव हूणों के आक्रमण (ई० पू० पाँचवीं शताब्दी के अन्तिम चतुर्थांश में) के कारण पड़ा जो ससेनियन राजकोश की लूटी हुई धनराशि भी अपने साथ लाये थे। इस प्रकार लाये गये कुछ सिक्कों पर हूणों ने पुनः ठप्पा लगवाया था (देखिये आगे §१०४); किन्तु अन्य निःसन्देह, थोड़े अथवा बिना किसी परिवर्तन के ही, सिक्कों के रूप में प्रचलित रहे और उन सिक्कों के स्वरूप के आधार बने जिनका बाद के हूण तथा अन्य भारतीय सिक्कों में अनुकरण किया गया (देखिये आगे §१०५)। इस प्रकार ससेनियन प्रकार के सिक्कों—अग्रभाग : राजा का सर; पृष्ठभाग अग्निवेदिका—के प्रचलन

की भारत के कुछ भागों में निश्चित स्थापना हो गई और अनेक शताब्दियों तक इनका प्रचलन बना रहा (देखिये आगे §१२२)। जैसा कि सिक्कों से प्रमाणित होता है, सतवीं शताब्दी में भी मुल्तान और सिन्ध में ससेनियन साम्राज्य विद्यमान था (देखिये आगे §१०९)।

४. यूनानी-भारतीय सिक्के

§ *१७. यूनानी आक्रमण* :—काबुल की घाटी और उत्तर भारत में बैक्ट्रियन राजाओं का प्रवेश द्वितीय शताब्दी ई० पू० के आरम्भ से ही शुरू हो गया होगा। सेल्यूसिड ऐन्टियोकस ३ तथा बैक्ट्रियन यूथिडेमस के बीच युद्ध दोनों के बीच सन्धि में समाप्त हुआ (२०६ ई० पू०)। सम्भवतः इसी वर्ष, ऐन्टियोकस ने 'परोपनिसस' को पार करके उस समय काबुल घाटी पर शासन कर रहे 'सोफगसेनस' अथवा सुभगसेन के, जिसे जलोक के साथ समीकृत किया गया है (लइ II, पृ० २७३), साथ मैत्री-सम्बन्ध स्थापित किया।

पोहि. XI, ३४, ११।

§ *१८. यूथीदिमस और दिमित्रियस* :—यूथीदिमस (फलक १, १८) के शासनकाल में, और सम्भवतः उसके पुत्र दिमित्रियस (दिमितस) के नेतृत्व में ही प्रथम भारत विजय की गई थी (गा. पृ० xxii)। भारत के इस आरम्भिक तथ्य के प्रमाण के रूप में दिमितस का एक सिक्का उपलब्ध है जो, सम्भवतः, यूनानी और भारतीय सिक्का-प्रणालियों के बीच समझौते को व्यक्त करनेवाला प्रथम सिक्का है। (फलक १, १०)। यूनानी पद्धति की सामान्य बातें तो इसमें वर्तमान हैं, किन्तु सिक्के का आकार चौकोर भारतीय प्रकार का है तथा उसके पृष्ठ भाग पर अग्रभाग के यूनानी लेख का खरोष्ठी अक्षरों में अनुवाद जोड़ दिया गया है।

क. न्यूका. १८६९, पृ० १३६, फलक ४, ११; गा. फलक ३०, ३। दिमितस द्वारा भारत विजय के विस्तार के लिये देखिये गुई., पृ० ४४, और गा. पृ० XXIII.

§ *१९. यूक्रेतिदस* :—कालक्रम की दृष्टि से इसके बाद दिमित्रियस के प्रतिद्वन्द्वी विजेता (जस्टिन, ४१, ६) यूक्रेतिदस द्वारा भारत-विजय (ई० पू० १९०–१६०) की घटना आती है। इसके सिक्के बल्ख, सीस्तान, काबुल घाटी, तथा अपेक्षाकृत अधिक दुर्लभ रूप से पंजाब में भी मिलते हैं।

क. न्यूक्रा. १८६९, पृ० २१७, फलक ६. ७। यूक्रेतिदस के समय के लिये : फान साले, त्सीन्यू. १८७९, पृ० १७०; गा. पृ० XXVI। मिथ्रदतस के पार्थियन सिक्कों के यूक्रेतिदस के सिक्कों की अनुकृति होने के सम्बन्ध में : गा. पार्थियन कॉयनेज, पृ० ३२, फलक २. ४ (=इओ. १, भाग ५)। २० स्टेटर्स (Staters) के यूक्रेतिदस द्वारा ठप्पा लगवाये गये सोने के टुकड़े : चान्यू. १८६७, पृ० ३८२, फलक १२, "लेयूक्रे." वही, पृ० ४०७। यूक्रे. के सोने के सिक्के : मॉन्टेगू, न्यूक्रा. १८९२, पृ० ३७, फलक ३, ११। तुक्रो. त्सीन्यू. १८७९, पृ० २९५ भी। यूक्रेतिदस अथवा हेलियोक्लीज़ को आरोपित चाँदी का तमगा (Decadrachm), गा. न्यूक्रा. १८८७, पृ० १७७, फलक ७. १। यूक्रेतिदस के ऐसे सिक्के जिन पर हेलियोक्लीज़ और लाओडिसे (Laodice) के भी नाम हैं : फान साले, त्सीन्यू. १८७९, पृ० १८८; गुई. पृ० ४८; गा. पृ० XXIV।

§ *२०. यूनानी-भारतीय सिक्कों का समय* :—इस समय के तिथिक्रम के लिये सेल्यूकस-संवत १४७ = ई० पू० १६५, की तिथि से अंकित और यूक्रेतिदस के एक टेट्राड्रेक्म (Tetradrachm) के आधार पर निर्मित प्लेटो के एक अद्वितीय Tetradrachm का पर्याप्त महत्त्व है। बैक्ट्रियन सिक्कों पर मिलने वाली अन्य तिथियाँ अपेक्षाकृत कम निश्चित हैं।

गा. पृ० २०, फलक ६, ११; वॉक्स, न्यूक्रा. १८७५, पृ० १; फान साले, त्सीन्यू. १८७९, पृ० १७३. १९०। देखिये प्रो. बंएसो. १८७२, पृ० ३४, १७४; क. न्यूक्रा. १८६९, पृ० २२६; १८९२, पृ० ४५; हॉर्नले, इन्ड. ऐन्टी. १८७९, पृ० १९६; थॉ. जएसो. १८७७, पृ० ३; फान साले, त्सीन्यू. १८७९, पृ० १८४।

§ *२१. पन्तलेव, अगथुक्रेय* (Pantaleon, Agathocles) :—भारत में यूक्रेतिदस के शासनकाल के ही समकालीन पन्तलेव और अगथुक्लेय के शासन भी हैं

जिनके सिक्के काबुल घाटी तथा पश्चिम पञ्जाब में—अगथुक्लेय के सिक्के कन्दहार जैसे दक्षिण के क्षेत्र में भी (क. न्यूका. १८६९, पृ० ४१)—मिलते हैं। इन दो शासकों के भारतीय सिक्के यूनानी राजाओं के एकमात्र ऐसे सिक्के हैं जिन पर लिखावट ब्राह्मी अक्षरों में है (**फलक** १, १२, पन्तलेव)। अगथुक्लेय के कुछ तांबे के सिक्कों पर दोनों, अग्र और पृष्ठ भागों पर, लेख खरोष्ठी अक्षरों में लिखे मिलते हैं (**फलक** १. १६)।

क. न्यूका. १८६८, पृ० २७१, फलक ८, ८-१०, फलक १०; फान साले, त्सीन्यू १८७९, १७५, फलक ५; गा. पृ. XXVI, फलक ३, ८. ९, ४, और ३०, ४। अगथुक्लेय के सिक्कों के खरोष्ठी में लिखे लेखों के पाठ के लिये : बूह्लर, वीमा. ८, पृ. २०६।

§ २२. *अगथुक्लेय* :—अगथुक्लेय द्वारा बनवाये गये बैक्ट्रियन बनावट के कुछ तमगे (Tetradrachms) सिकन्दर महान, ऐन्टियोकस 'निकातोर' (देखिये गुई. पृ० ३८; गा. पृ० XXVIII, नोट), दियोदतस, तथा यूथीदिमस (Euthydemus) के चित्र, प्रकार, तथा लेखों से अंकित हैं। बैक्ट्रियन राजा ऐन्टीमेकस (Antimachus) के इसी समान तमगों पर भी दियोदतस (Diodotus) तथा यूथीदिमस के लेख हैं।

गा. फलक ४, १-३, और ३०, ५-६ (ऐन्टीमेकस और यूथीदिमस का तमगा अभी भी एक भारतीय सिक्का-विक्रेता के पास है, और प्रकाशित नहीं हुआ है)। इनके ऐतिहासिक महत्त्व के लिये : फान साले, त्सीन्यू. १८७९, पृ० १७६; १८८१, पृ० २७९; गा. पृ० XXVIII। देखिये न्यूका. १८६८, पृ० २७८; १८६९, पृ० ३१; १८८०, पृ० १८१; प्रिए. १, पृ. २८, भी।

§ २३. *ऐन्टीमेकस* :—(Antimachus) :—ऐन्टीमेकस के सिक्कों के प्रकार सम्भवतः सिन्ध अथवा किसी अन्य बड़ी नदी पर उसके द्वारा विजित किसी नौसैनिक विजय की ओर संकेत करते हैं।

गा. पृ० XXIX. १२, फलक ५, १-३; क. न्यूका. १८६९, पृ० ३९।

§ २४. *हेलियोक्लीज़* (Heliocles) :—हेलियोक्लीज़ के शासन (१६०–१२० ई० पू०) के बाद यूनानी शक्ति का बैक्ट्रिया से परोपेनिसस (Paropanisus) के दक्षिण के क्षेत्र में स्थानान्तरण पूर्ण हो गया। इसके समय तक अनेक यूनानी राजा बैक्ट्रिया तथा भारत दोनों पर शासन करते हुए दोनों प्रकार के : विशुद्धतः यूनानी लेखों से युक्त बैक्ट्रियन बनावट, तथा द्विभाषी लेखों से युक्त भारतीय बनावट के सिक्के बनवा चुके थे। इस समय तक सभी चाँदी के सिक्कों का निर्माण यूनानी मानक (ड्राक्म = ६७. ५ ग्रेन अथवा ४. ३७ ग्राम) के अनुसार बने थे। इस यूनानी मानक ने क्रमशः ईरानी मानक (देखिये ऊपर § ८) को स्थान दे दिया। स्वयं हेलियोक्लीज़, अपल्लदतस १ (Apollodotus), और ऐन्टिअलसिदस (Antialcidas), दोनों मानकों का व्यवहार करते हैं। बाद के सभी यूनानी राजा केवल ईरानी मानक ही व्यवहार में लाते हैं।

फान साले. त्सीन्यू., १८७९, पृ० १८३; गा. पृ० LXVII।

२५. *हेलिओक्लीस के उत्तराधिकारी* :—हेलियोक्लीस के बाद शासन करने वाले समस्त यूनानी राजाओं को—सिक्कों के अनुसार इनकी संख्या २० थी—एक शताब्दी की अवधि के बीच ही सीमित करना चाहिये, अर्थात् १२० ई० पू० से २० ई० पू० तक, जब कुषाणों ने भारत पर अपनी विजय पूर्ण की। इस अवधि के पर्याप्त अंश में निःसन्देह ही स्पष्टतः दो या अधिक यूनानी राजवंश एक ही समय में शासन करते थे जिनकी शक्ति तथा शासन क्षेत्र में समय-समय पर बहुत विभेद था। इन विभिन्न वंशों अथवा इस अवधि के कालक्रम के सम्बन्ध में अभी तक कोई सर्वथा संतोषजनक व्यवस्था प्रस्तावित नहीं हो सकी है।

एक व्यवस्था के परामर्श के लिये : क. न्यूक्रा. १८६८, पृ० २७४। उपलब्ध आँकड़े और कालक्रम-तालिका : गा. पृ. XXXII और बाद। फान साले, त्सीन्यू. १८७९, पृ० १९१। मिनेन्दर तथा अपलदतस की ऐतिहासिकता : गा. पृ० XXXVI; लइ. २, पृ० ३२२; प्रिए. १, पृ० ४७; रिडे. सेबुई. ३५, पृ० XIX; गुई, पृ० १०४। आर्चेबियस

(Archebius) और फिलोक्सेनस (Philoxenus) के नामों से युक्त सिक्का (इस नमूने तथा इसी ठप्पे से निर्मित अन्य की प्रामाणिकता पर शंका प्रकट की गई है) : फान साले, त्साॅन्यू. १८८८, पृ० ९, फलक १, ३; वही १८९६, पृ० ३२७। पोलिक्सेनस (Polyxenus) का सिक्का : रॉजर्स : न्यूक्रा. १८९६, पृ० २६९; थियोफिलस (Theophilus) का सिक्का : स्मिथ, जबंसो, १८९७, पृ० १। मिश्रित अक्षरों की व्याख्या के लिये : क. न्यूक्रा. १८४६, पृ० १७५; १८६८, पृ० १८१; १८८८, पृ० २०४; चान्यू. १८६७, पृ० ३९३; थॉ. जएसो. १८६३, पृ० १२१; प्रिए. १. पृ० ५५; फान साले, त्सीन्यू. १८७९, पृ. २००; गा. पृ० LV; हार्नले, इन्डि. ऐन्टी. १८७९; पृ० १९६। बैक्ट्रियन सिक्कों के लिये प्रयुक्त निकल धातु : फलाइट, न्यूक्रा. १८६८, पृ० ३०६।

५. भारत के शक आक्रामक

§ २६. फिर भी, ईसापूर्व की अन्तिम दो शताब्दियों में उत्तर भारत के इतिहास की कालक्रमगत कठिनाइयाँ, केवल यूनानी राजवंशों तक ही सीमित नहीं हैं। इस अवधि में सिक्के दो शक-वंशों के स्पष्टतः, अन्य शक-शक्तियों के अपेक्षाकृत कम स्पष्ट रूप से, तथा अनेक देशीय हिन्दू राज्यों के अस्तित्व का प्रमाण प्रस्तुत करते हैं।

§ २७. *शक आक्रमण :*—बैक्ट्रिया तथा भारत के यूनानी राज्यों के सम्पर्क में आनेवाली इन शक-जातियों का इतिहास हमें चीनी स्रोतों से ज्ञात होता है।

इनकी तालिका के लिये : ड्रन्यू. १८८८, पृ० १३।

इनके अवशिष्ट सिक्कों के विवेचन के लिये निम्न तिथियाँ तथा तथ्य पर्याप्त होंगे।

बैक्ट्रियन राजतन्त्र की स्थापना के समय, उत्तर के क्षेत्र—सोग्दियाना (Sogdiana) और ट्रान्सोक्सियाना (Transoxiana)—'स्से' (अथवा 'सेक') के नाम से पुकारी जानेवाली उन जातियों के अधिकार में थे जो चीन के दक्षिण भाग से आये थे।

सामान्यतया इन 'स्से' को शकों के साथ समीकृत किया गया है, जिनका, पूर्व के समय में, एचमेनिड (Achaemenid) और मेसिडोनियन (Macedonian) शक्तियों के साथ संघर्ष हुआ था। ई० पू० १६५ में, 'स्से' लोगों को सोग्दियाना से उन 'येह-ची'

(Yueh-chi) लोगों ने बहिष्कृत कर दिया जो स्वयं हियुङ्ग-नू के भय से भाग रहे थे। इस प्रकार अपदस्थ शकों ने बैक्ट्रिया पर आक्रमण किया। उस समय से लेकर बैक्ट्रियन राजतन्त्र के पतन तक यूनानियों को, पार्थियों तथा शकों, दोनों का सामना करना पड़ता था; जबकि पार्थियों तथा शकों में कभी मित्रता और कभी शत्रुता की स्थिति रहती थी। सम्भवतः पार्थियों के साथ इस सम्बन्ध के कारण ही भारत के प्राचीनतम शक-सिक्कों में कुछ पार्थियन विशिष्टता आ गई है (देखिये आगे § २९)। येह-ची ने, जिसके अधिकार में अब शकों का प्राचीन क्षेत्र आ गया था, बैक्ट्रिया पर आक्रमण करके उस पर पूर्ण अधिकार प्राप्त कर लिया (ई० पू० १२०)। भारत पर प्रथम शक-आक्रमण का निःसन्देह यही तात्कालिक कारण था। एक शताब्दी बाद, अथवा २५ ई० पू० के लगभग येह-ची के पाँच कबीलों में से एक, कुषाण, ने अन्य पर प्रभुत्व प्राप्त करने के पश्चात् परोपेनिसस (Paropanisus) में आकर काबुल-घाटी में यूनानी शासन के अन्तिम चिह्नों को नष्ट कर दिया और उसके बाद सम्पूर्ण उत्तर भारत को विजित कर लिया।

स्पेख्त, जए. १८८३, पृ० ३१७ (देखिये इन्डि. एन्टी. १८८६, पृ० १९); ड्रन्यू, १८९१, पृ० २१७=जए. १८९१ (१७), पृ० १४५। किन्तु देखिये एस. लेवी, जए. १८९७, पृ० १ और बाद।

§ २८. *पूर्वकालीन सिक्कों के शक अनुकरण* :—मेसिडोनियन, सेल्यूकसीय, बैक्ट्रियन, तथा पार्थियन सिक्कों के नृशंस अनुकरण बैक्ट्रिया में शक-शासन काल में किये गये। सामान्य रूप से ये सिक्के केवल अनुकरणमात्र और इनके लेख भी यूनानी लेखों की हीन प्रतिकृतियाँ हैं। परन्तु कुछ सिक्कों पर ऐसे लेख हैं जिन्हें तुर्किस्तान की आर्मियन लिखावट का सर्वाधिक प्राचीन उदाहरण माना गया है (फलक १, १८. १९, यूथिदिमस : एक बैक्ट्रियन मूल, और एक शक अनुकृति)।

क. न्यूक्रा. १८८९, पृ० ३०१, फलक १३; ड्रन्यू. १८९१, पृ० २२२; १८९४, पृ० १७४; वही, रिव्यू सेमिटिकें, १८९३, पृ० १७३; क. काऐइ. पृ० ३५; प्रिए. १, पृ० ३०।

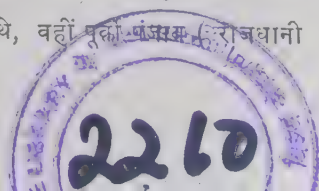
§ २९. *मास, मोआ* (Maues, Moa) :—भारत में मास अथवा मोआ ही सर्वाधिक प्राचीन शकवंश है जिसे सम्भवतः तक्षशिला के ताम्र-पत्र के मोग (Moga) के साथ समीकृत किया जाना चाहिये (बूहलर, एइ. ४, पृ० ५४; भगवान लाल इन्द्रजी, जएसो. १८९४, पृ० ५५१)। इसका समय सम्भवतः ई० पू० १२० से बाद का नहीं है। यही इसके सिक्कों की बनावट के भी अनुकूल है जो निर्माण-कला की दृष्टि से बाद के यूनानी राजाओं से श्रेष्ठ हैं। यह इस तथ्य के भी अनुकूल है कि इनमें से कुछ पहले के यूनानी राजाओं, जैसे दिमितस और अपलदतस (**फलक** १, १४, दिमितस के सिक्कों का अनुकरण, गा. फलक ३, २) के सीधे अनुकरण हैं। मास (Maues) द्वारा प्रयुक्त लेख का स्वरूप *ΒΑΣΙΛΕΩΣ ΒΑΣΙΛΕΩΝ ΜΕΓΑΛΟΥ* — (**फलक** १, १५) का स्रोत पार्थियन प्रतीत होता है (देखिये ऊपर § १३), और प्रथम मिथ्रदतस १ के सिक्कों (ई० पू० १७१–१३८) पर भी आता है। मास वंश के सिक्के केवल पञ्जाब में—विशेषतः उत्तर-पश्चिम में—ही मिलते हैं, अफगानिस्तान में नहीं (क. न्यूक्रा. १८९०, पृ० १०४)। अतः यह अनुमान किया गया है (गा. पृ० xli; ड्रून्यू. १८८८, पृ० २०; और जए १८९१, १७, पृ० १४६ = रिव्यू न्यूम. १८९१, पृ० २१९) कि शकों के इस जिरगे ने, अन्य विदेशी आक्रामकों के विपरीत, भारत में काराकोरम दर्रे से प्रवेश किया और काश्मीर से होता हुआ पंजाब आया। फिर भी, कनिङ्घम इस सम्भावना को अस्वीकृत करते हुये यह मानते हैं कि अरकोसिया तथा ड्रेन्गियाना (Arachosia, Drangiana)—जिसे बाद में शकस्थान कहा जाने लगा—पर शकों के आधिपत्य के पश्चात् उनकी एक टुकड़ी मास के नेतृत्व में वहाँ से सिन्ध होती हुई सिन्धुनदी की ऊपरी घाटी में चली आई।

क. न्यूक्रा. १८९०, पृ० १०३; गा. पृ० ६८, फलक १६; फान साले : त्सीन्यू. १८७९, पृ० ३३४; १८८२, पृ० १६१; १८८३, पृ० १५९। देखिये एऐ. पृ० ३००; जबंसो. १८४०, पृ० १००८; न्यूक्रा. १८६१, पृ० ७२; प्रिए. २, पृ० २००।

§ ३० *वोनोनस* (Vonones) :—मास (Maues) के वंश से प्रायः सम्बद्ध ही वोनोनस वंश भी है (**फलक** १. १७ : वोनोनस और स्पलगदम, Spalagadama), जिसके सिक्के कन्दहार तथा गजनी प्रदेशों के आस-पास, प्राचीन अराकोसिया (Arachosia), प्राचीन ड्रैन्गियाना, और सीस्तान तक में मिलते हैं। इन राजाओं के नामों का पार्थियन स्वरूप अत्यन्त उल्लेखनीय है, और इसीलिये कभी-कभी इनके लिये भारतीय-पार्थियन शब्द का व्यवहार किया गया है। इनकी पार्थियन उत्पत्ति की पुष्टि में इस तथ्य का भी उल्लेख किया जा सकता है कि ईसा की प्रथम शताब्दी में उसी क्षेत्र पर निश्चित रूप से एक पार्थियन वंश—गोन्दोफेरस (Gondophares) (§ ६१) वंश का, जिसके लिये ही प्रस्तुत निबन्ध में 'भारतीय-पार्थियन' उपाधि को सीमित रक्खा गया है—का शासन था। यह भी निश्चित है कि इसी समय मास तथा वोनोनस के वंशों में घनिष्ठ सम्बन्ध था, और इन दोनों को इस सीमा तक पृथक् करना कठिन है कि प्रथम को शक तथा दूसरे को पार्थियन कहा जाय। इस कठिनाई की व्याख्या सम्भवतः यह मान कर करनी चाहिये कि इस अवधि के शकों में कुछ विगत घटनाओं के कारण शक्तिशाली पार्थियन तत्त्व वर्तमान थे।

§ ३१. *वोनोनस, अजेस* (Vonones, Azes) :—यतः वोनोनस ने मास के उत्तराधिकारी, अजेस (Azes), के साथ ही सिक्कों पर ठप्पे लगवाये, अतः उसका समय सम्भवतः १०० ई० पू० हो सकता है। शकों तथा शक-पार्थियों के इन दो शासक-परिवारों में वास्तव में क्या सम्बन्ध था इसे ठीक-ठीक कह सकना असम्भव है; किन्तु ऐसा विदित होता है कि जहाँ भी इन दोनों ने साथ-साथ सिक्कों पर ठप्पे लगवाये हैं वहाँ निश्चित रूप से वोनोनस परिवार के सदस्य सिक्कों के अग्रभाग पर तथा मास परिवार के सदस्य पृष्ठ भाग पर आते हैं। प्राचीन मुद्राशास्त्र के अन्य समान उदाहरणों के आधार पर निर्णय करने पर इस तथ्य द्वारा यह प्रतीत होगा कि प्रथम का द्वितीय पर किसी न किसी प्रकार का प्रभुत्व अवश्य था।

यह सम्भव हो सकता है कि जहाँ वोनोनस वंश अराकोसिया तथा ड्रैंग्नियाना (शकस्थान) पर, और मास वंश तक्षशिला में राजधानी बनाकर सिन्धुघाटी (अर्थात पश्चिमी पंजाब और सिन्धु दोनों) पर शासन करते थे, वहीं पूर्वी पंजाब (राजधानी



शाकल) तथा काबुल-घाटी पर अधिकांशतः यूनानी राजाओं का शासन था (क. न्यूक्रा. १८९०, पृ० १०९)।

क. न्यूक्रा. १८९०, पृ० १०६, फलक ७।

§ ३२ *मथुरा के क्षत्रप* :—शक क्षत्रपों की ही भाँति मथुरा के क्षत्रपों (अथवा उत्तरी क्षत्रपों) को भी ई० पू० की प्रथम शताब्दी के उत्तरार्द्ध में ही रखना चाहिये, जिनके इतिहास पर मथुरा के सिंहशीर्ष के लेखों (भगवानलाल इन्द्रजी, सं० बूहलर, जएसो. १८९४, पृ० ५२५) तथा वहीं के निकटवर्ती अन्य लेखों से (बूहलर, एइ. २, पृ० १९५) पर्याप्त प्रकाश पड़ता है।

इनके सिक्कों के लिये : क. काऐइ. पृ० ८५, फलक ८; भगवानलाल इन्द्रजी, सं० रैपसन, जएसो. १८९४, पृ० ५४१। देखिये जबंसो. १८५४, पृ० ६७९; प्रिए. २, पृ० २२३; स्मिथ, जबंसो. १८९७, पृ० ९, फलक १, १५।

§ ३३. *रञ्जुबुल* :—मथुरा के इन क्षत्रपों के समय के लिये महत्त्वपूर्ण कालक्रम सबन्धी आँकड़े इस प्रकार हैं :—(१) प्रथम क्षत्रप रञ्जुबुल ने (**फलक** २, ५), जो निश्चित रूप से सिंहशीर्ष का राजुल है, ऐसी सिक्का शैली चलाई जो यूनानी राजा स्ट्राटो २ (**फलक** २, ४) का सीधा अनुकरण है; (२) सिंहशीर्ष के महाक्षत्रप कुसुल पतिक (Kusulaa Patik) को प्रायः निश्चित रूप से उस क्षत्रप पतिक के साथ समीकृत किया जाना चाहिये जो महाराज मोग (देखिये ऊपर § २९, बूहलर एइ. ४, पृ० ५४, और भगवानलाल इन्द्रजी, जएसो. १८९४, पृ० ५५२) के ७८ वें वर्ष की तिथि से अङ्कित तक्षशिला ताम्र-पत्र के लियक कुसुलुक (Liak Kusuluka) का पुत्र था। रञ्जुबुल के सिक्कों का अन्य वर्ग, जिन पर उसका नाम ब्राह्मी अक्षरों में राजुबुल लिखा है (**फलक** २, ६), तथा मथुरा के क्षत्रपों के सिक्के आकार तथा बनावट की दृष्टि से पञ्चालों (शुङ्गों) और मथुरा के हिन्दू राजाओं (देखिये आगे §§ ५२. ५३) के साथ सम्बद्ध हैं।

5128

§ ३४. *अन्य शक क्षत्रप*—शक-सिक्कों के अन्य वर्गो को कुषाणों के प्रभुत्व के पूर्व का मानना अभी अपेक्षाकृत अधिक संदिग्ध है। इनमें से कुछ का मास के उत्तराधिकारियों—अज़ेस और अज़िलिसस (Azilises)—के सिक्कों से अनुकरण किया गया है; और यतः इन पर 'क्षत्रप' उपाधि अङ्कित है, अतः इन्हें बहुत सम्भवतः इसी वंश के क्षत्रपों ने निर्मित कराया होगा। इनमें से एक, क्षत्रप मनिगुल के पुत्र, क्षत्रप ज़ियोनिसस (Zeionises) (जिहोनिस Jihonisa, **फलक** २, ३) का सिक्का सम्भवतः ई० पू० ८० जैसे प्राचीन समय का है (क. न्यूक्रा १८९०, पृ० १२५. १६८, **फलक** १५, १, ४ª)। इसी समय अज़ेस के स्ट्रटेगोस (Strategos of Azes) (वही पृ० १२६. १६९; किन्तु देखिये आगे § ६१ भी) और एक शासक इन्द्र-वर्मा, जिसके नाम की अभी खोज नहीं की जा सकी है और जो अभी केवल विजय-मित्र के पुत्र के रूप में ज्ञात है (वही पृ० १२७, १७०), का पुत्र अस्पवर्मा भी इसी समय हुआ। अर्तस (Artas) के पुत्र (वही) खरमोस्त (Kharamosta) के भद्दे ढङ्ग से निर्मित सिक्के इसके कुछ बाद के हैं।

मथुरा के सिंहशीर्ष के 'खरओस्त' के साथ इस 'खरमोस्त' के प्रस्तावित समीकरण के लिये देखिये बूह्लर की टिप्पणी, जएसो. १८९४, पृ० ५३३।

§ ३५. *संदिग्ध वर्ग :*—निम्न शक राजाओं की, जिनके सिक्के प्रायः सबके सब ई० पू० की प्रथम शताब्दी के उत्तरार्द्ध के ही प्रतीत होते हैं, ठीक-ठीक राष्ट्रीयता सन्दिग्ध है।

मियोस (Miaus) अथवा हेरोस (Heraus) (**फलक** २, १) : इस नाम का प्रथम पाठ वह है जिसे कनिङ्घम (न्यूक्रा. १८८८, पृ० ४७) ने अन्ततः ग्रहण किया है। पहले इस शासक की शक-राष्ट्रीयता को स्वीकार कर लिया गया था, और इसके टेट्राड्रेक्म के लेख के एक अंग को *ΣAKA KOIPANOY* 'शकों का राजा' (गा. पृ० XLVII) के रूप में पढ़ा गया था। ऑल्डेनबर्ग ने कुषाणों को शकों का एक परिवार मानते हुये (तुकी० कनिष्क की उपाधि : 'गुषनवंश-संवर्द्धक'), तथा शकों और 'यूयेह-ति' (Yueh-ti) को या तो एक ही जाति के लोग अथवा शकों को 'यूयेह-ति' की एक

उपजाति मान कर (त्सीन्यू. १८८१, पृ० २९५ = इऐ. १८८१, पृ० २१५) *ΣΑΚΑ–ΚΟΡΡΑΝΟΥ* को 'शक–कुषन' पढ़ा है। थॉमस ने लेख के प्रथम अंश को *ΣΑΝΑΒ* अथवा *ΣΑΝΑΣ* पढ़ा है, और प्रथम तीन अक्षरों को 'संवत्सर' का संक्षेप, चौथे को यूनानी अंक = १, और अन्तिम को सम्भवतः किसी टकसाल विशेष का द्योतक माना है (जएसो. १८८३, पृ० ७५)। कनिङ्घम ने ओबोली (Oboli) के लेख के साथ तुलना करते हुये, जो स्पष्टतः *ΜΙΑΟΥ ΚΟΡΣΑΝΟΥ* है, *ΣΑΝΑΒ* अथवा *ΣΑΝΑΟΒ* और *ΚΟΡΡΑΝΟΥ* अथवा *ΚΟΡΣΑΝΟΥ* पढ़ा है, और यह मानकर कि प्रथम शब्द शकों की राजकीय उपाधि त्सन्यु अथवा छन्यु = कुषाणों द्वारा अपने लेखों में प्रयुक्त उपाधि 'देवपुत्र' (न्यूक्रा. १८८८, पृ० ४७; १८९०, पृ० १५५) है, इसका 'कुषाण राजा' अनुवाद किया है। इन्होंने यह भी विचार व्यक्त किया है कि यह 'मियोस' वही 'यिन-मो–फु' नामक अभियानकर्त्ता हो सकता है जिसे चीनियों ने ई० पू० ४९ में 'किपिन्' का विजेता माना है (रेए. १, पृ० २०७; क. न्यूक्रा. १८८८, पृ० ५१)। चाँदी के के सिक्कों, 'टेट्राड्रेक्मस' तथा 'ओबोल्स', पर केवल यूनानी लेख ही हैं। एक द्विभाषी (यूनानी और खरोष्ठी) ताँबे के सिक्के को 'मियोस' (Miaus) का ही माना जाय या नहीं यह संदिग्ध है। यदि ऐसा हो तो इसका प्रमाण यह सिद्ध करेगा कि 'मियोस' हिन्दू कुश के दक्षिण के क्षेत्र पर शासन करता था। इस तथ्य द्वारा इस दृष्टिकोण को बल मिलता है कि सभी 'ओबोल' पश्चिमी अफगानिस्तान में ही मिले हैं (क., उ. पु., पृ० ५०)। इसके विपरीत मत के लिये देखिये गा. पृ० XLVIII, और नीचे § ३६।

शकों और कुषाणों के सिक्कों की विशिष्ट भिन्नता के लिये, जिसकी व्याख्या का सम्बन्ध 'मियोस' की राष्ट्रीयता से है, देखिये क. न्यूक्रा. १८८९, पृ० २९४।

§ ३६. मियोस (Miaus) के 'ओबोल' (obol) बनावट तथा चित्रण दोनों की दृष्टि से 'हिर्कोदस' (Hyrcodes) (**फलक** २, २) के सिक्कों के ही समान हैं, जो निश्चित रूप से परोपेनिसस (Paropanisus) के भारतीय क्षेत्र में बने नहीं प्रतीत होते, बल्कि कुषाणों अथवा 'यूयेह-ति (Yueh-ti) के ई० पू० १२० में बैक्ट्रिया में बसने से बाद उसके द्वारा बनवाये गये सिक्कों की श्रेणी में आते हैं। 'सपलज़स'

(Sapaleizes) के सिक्के भी इसी श्रेणी के अन्तर्गत आते हैं जिन पर उस देवी 'नन्नैअ' (Nannaia) का नाम अंकित है जिसकी मूर्त्ति कुषाणों—कनिष्क, हुविष्क और वासुदेव—के सिक्कों पर बहुधा मिलती है।

क. न्यूक्रा. १८८९, पृ० ३०३; गा. पृ० XLVIIi, ११७, फलक २४, ८-१६।

§ ३७. निम्नलिखित के सम्बन्ध में किसी प्रकार की भी पर्याप्त व्याख्या नहीं की जा सकी है :—

(१) गा पृ० १६२, फलक xxix, १५ में प्रकाशित सोने का सिक्का, जिसे भारतीय-शक वर्ग के अन्तर्गत वर्गीकृत किया गया है, अनिश्चित है। सम्भवतः यह सिक्का, जो समस्त ज्ञात सिक्कों से महत्त्वपूर्ण अंशों में भिन्न है, दो मुहरों या रत्नों के आकार-प्रकार का सोने का प्रतिरूप हो।

(२) मोटा चांदी का टुकड़ा जो पहले जेनरल मैलकम जी. क्लार्क के पास था, और अब ब्रिटिश संग्रहालय में है। इसे 'ओक्सस' (Oxus) देश से आया बताया गया है और इस पर ऐसी लिखावट है जिसकी अबतक संतोषजनक व्याख्या नहीं हो सकी है। यह सम्भवतः केवल एक आधुनिक जाली सिक्का मात्र हो, अथवा किसी टोने-टोटके या आभूषण के लिये उद्दिष्ट हो।

प्रो. बंएसो. १८८४, पृ० १२७; वही, १८८५, पृ० ३।

§ ३८. *भारतीय-चीनी सिक्के* :—काशगर के आस-पास मिले ताँबे के सिक्के (जउसो. ४७, पृ० १२), जिन पर भारतीय (खरोष्ठी) तथा चीनी दोनों में लेख हैं, इस क्षेत्र में किसी भारतीय शक्ति—सम्भवतः यूनानी अथवा शक—के विस्तार को व्यक्त करते हैं। चीनी लेख सिक्कों के वजन अथवा मूल्य से सम्बद्ध हैं। जो कुछ थोड़े से उपलब्ध नमूने हैं उनके खरोष्ठी लेख अपूर्व हैं किन्तु निश्चित रूप से उन पर एकाधिक शासकों के नाम के अंश वर्तमान हैं। इन सिक्कों को ज्ञात यूनानी या शक राजाओं का मानने के जितने भी विचार प्रकट किये गये हैं वे केवल अनुमान मात्र हैं।

टेइ. १८९०, पृ० ३३८ (रिन्यू १८९०, पृ० २५६ में आलोचना); गा. न्यूक्रा. १८७९, पृ० २७४ (भूगोल सम्बन्धी परिशिष्ट, होवर्थ, पृ० २७९); गा. पृ० १७२, संख्या ४।

६. प्राचीनतम समय से ५० ई० तक के भारत के देशी राज्यों के सिक्के

§ ३९. भारतीय मुद्राशास्त्र की इस शाखा पर अभी कुछ समय से ही व्यवस्थित ध्यान दिया जाने लगा है, तथा इसमें इतनी कठिनाइयाँ हैं कि यहाँ अंग्रेजी वर्णानुक्रम के अनुसार केवल उन राज्यों की तालिका प्रस्तुत करना ही सर्वाधिक सुविधाजनक होगा जिनके आरम्भिकतम सिक्कों को किसी सम्भावना के साथ ऊपर दी हुई विस्तृत अवधि-सीमा के अन्तर्गत सम्मिलित किया जा सकता है।

§ ४०. *अल्मोड़ा* :—अल्मोड़ा के पास से प्राप्त तीन नमूने हैं जो अब ब्रिटिश संग्रहालय में हैं। इनकी बनावट भारत की किसी भी अन्य ज्ञात सिक्का-शैली से भिन्न है। ये चांदी-मिश्रित धातु के बने प्रतीत होते हैं और किसी भी अन्य भारतीय सिक्के से भारी हैं। इनमें से दो पर सम्भवतः प्रथम शताब्दी ई० पू० और ईसा की द्वितीय शताब्दी के बीच के समय के बड़े-बड़े ब्राह्मी अक्षरों में शिवदत्त और शिवपालि [त] नाम अङ्कित हैं। इनका पृष्ठ भाग—एक चैत्य रेलिङ्ग—कुछ-कुछ पञ्चाल-सिक्कों के समान है (देखिये आगे § ५३), और अग्र-भाग पर कुणिन्दों के सिक्कों (देखिये आगे § ५०) के समान एक मृग बना है।

प्रिए, १, पृ० २२४।

§ ४१. *अपरान्त* :—इन सिक्कों के लेख को 'महाराजस अपलातस' पढ़ा गया है। यतः इनका स्वरूप मथुरा के क्षत्रपों तथा उन्हीं के आस-पास के हिन्दू राजाओं के समान है (देखिये ऊपर § ३२) अतः इनका समय ई० पू० प्रथम शताब्दी का उत्तरार्द्ध या ईसा की प्रथम शताब्दी का पूर्वार्द्ध हो सकता है।

क. काऐइ., पृ० १०३; क. आसरि. १४, पृ० १३६, फलक ३१, ३. ४; प्रिए. २, फलक ४४, २५. २६। अपरान्त के स्थान = उत्तरी कोंकन के लिये : भण्डारकर, ट्राका. १८७४, पृ० ३१३; और हिडे. पृ० २७, नोट ४; कनिङ्घम, अपने काऐइ. पृ० १०२, में यह मानते हैं कि अपरान्त = पश्चिमी राजपूताना।

§ ४२. *आर्जुनायन* (**फलक** ३, २०) :—ये सिक्के गत सिक्कों के ही वर्ग तथा समय के अन्तर्गत आते हैं। समुद्रगुप्त के इलाहाबाद स्तम्भ-शिलालेख (फ्लीट, CII. III, पृ० ८, और भूमिका पृ० १०) में आर्जुनायनों का उल्लेख है।

क. काऐइ. पृ० ९०, फलक ८, २०; प्रिए. फलक ४४, २२।

§ ४३. *औदुम्बर अथवा ओदुम्बर* (**फलक** ३, ८) :—पठानकोट जिले में मिलनेवाले ये सिक्के, स्वरूप में यूनानी राजा अपलदतस (Apollodotus) के हेमी-ड्रेक्म्स के समान हैं और उसी के सिक्कों के साथ मिलते हैं। अतः इनका समय सम्भवतः १०० ई० पू० है। क. काऐइ. फलक ४, १ में दिये गये औदुम्बर-सिक्के तथा न्यूक्रा. १८९०, फलक १०, ५a में दिये गये एक अजिलिसस (Azilises) के सिक्के में भी आकार-प्रकार की समानता लक्षित होती है। अपने समकालीन कुणिन्दों के समान ही, औदुम्बरों ने भी सिक्कों पर लेख के लिये ब्राह्मी तथा खरोष्ठी, दोनों का व्यवहार किया है।

क. काऐइ. पृ० ६६, फलक ४; क. आसरि. १४, पृ० ११५, फलक ३१, १. २; प्रो. बंएसो. १८८५, पृ० ९६; रॉजर्स, कैटलॉग ऑफ लाहौर म्यूज़ियम; ३ पृ० १५१; स्मिथ जबंसो. १८९७, पृ० ८, फलक १, १२।

§ ४४. *अयोध्या* :—यहाँ के प्राचीनतम सिक्के ढले हुए (**फलक** ४, २, और क. काऐइ. फलक ३, १–३) प्रतीत होते हैं जिनका समय, सम्भवतः, २०० ई० पू० के पहले का है। चौकोर तथा लेखयुक्त टुकड़े, जिनमें से अधिकांश ढले ही प्रतीत होते हैं, (**फलक** ४, ४ और वही ४–११) भी द्वितीय शताब्दी ई० पू० के हो सकते हैं। अन्य भी, जिन पर '–मित्र' से अन्त होनेवाले नाम अंकित हैं (**फलक** ४, ३ और वही

१२–१९; देखिए स्मिथ, जएसो. १८८९, पृ० ५१) इसी तथा इसके बाद की शताब्दियों के प्रतीत होते हैं। इन 'मित्र' सिक्कों का उत्तर-पञ्चाल में मिले सिक्कों के साथ, और इन दोनों या इनमें से केवल एक वर्ग के सिक्कों का शुङ्ग वंश के साथ सम्बन्ध अभी एक सन्दिग्ध विषय है (देखिये आगे § ५३)।

क. काऐइ पृ० ९०, फलक ९; रिवेट-कार्नेक, जबंसो, १८८०, फलक १६, १७; प्रिए. १, पृ० ४१८, फलक ३४, १९–२१ इत्यादि।

§ ४५. *बारान्* :—कनिङ्घम ने इसे बुलन्दशहर का एक प्राचीन नाम मानते हुये सिक्कों के लेख को 'गोमितस बारानाया' पढ़ा है (क. काऐइ, पृ० ८८, फलक ८, १०; क. आसरि. १४, पृ० १४७, फलक ३१, १५); किन्तु जैसा कि बूहलर ने संकेत किया है, इस स्थान का प्राचीन नाम 'वरण' था, और सिक्कों के लेख का पाठ अत्यन्त संदिग्ध है। इस 'गोमित्र' को बहुधा इसी नाम के मथुरा के एक राजा के साथ समीकृत किया गया है (देखिये आगे § ५२); किन्तु उसके सिक्कों का स्वरूप भिन्न है और उन पर लिखे ब्राह्मी लेखों के अक्षर अधिक प्राचीन प्रतीत होते हैं।

§ ४६. *एरण–एरकिन* :—सागर जिले के इस प्राचीन नगर के ध्वंसावशेष से मिले सिक्के देशी सिक्कों के सर्वश्रेष्ठ उदाहरण होने के कारण अत्यन्त उल्लेखनीय हैं (फलक ४, ८)। यहाँ पञ्चमार्क पद्धति का ठप्पा प्रणाली के रूप में विकास देखना सम्भव है। समय-समय पर सिक्के पर अनेक चिह्नों को पंच करने की अपेक्षा, ऐसा प्रतीत होता है कि बाद के समय में अनेक चिह्नों के समूह का एक ठप्पा बना कर उससे सिक्कों पर ठप्पा लगा दिया गया है। भारत के उन भागों में, जो विदेशी प्रभाव से कम-से-कम प्रभावित हुये थे, यही सामान्य पद्धति थी (तुकी. आगे § १२९)।

क. काऐइ. पृ० ९९ फलक ११; क. आसरि. १०, पृ० ७७, फलक २४, १५–१७; वही, १४, पृ० १४९, फलक ३१, १७. १८। एरण के एक अत्यन्त प्राचीन सिक्के (फलक ४, ७) के पाठ के लिये देखिए बूहलर. इस्ट. ६, पृ० ४२: अन्य, कुछ बाद के समय के सिक्कों के लिए, जिन पर नगर का नाम अंकित है, देखिये क. आसरि. १०, उस्था.।

§ ४७. *जनपद* :—कभी ब्राह्मी और कभी खरोष्टी अक्षरों में लिखे 'राञ जनपदस' लेख से युक्त सिक्कों की कोई सन्तोषजनक व्याख्या नहीं की जा सकती। कनिङ्घम (आगे उस्था.) का विचार है कि यह सम्भवतः एक स्थान-नाम = राजस्थान, अथवा इस स्थान के निवासियों = *ΧΑΤΡΙΛΙΟΙ* अर्थात् टॉलमी के क्षत्रियों (७. १. ६४; तुकी. लइ. ३, पृ० १४१) का नाम हो सकता है। इसकी शैली के आधार पर निर्णय करते हुये यह कहा जा सकता है कि खरोष्ठी लेख से युक्त सिक्के (**फलक** ३, १८) उन सिक्कों से पहले के प्रतीत होते हैं जो बनावट की दृष्टि से मथुरा के क्षत्रपों के सिक्के हैं (**फलक** ३, १९)।

क. कऐइ. पृ० ८९, फलक ८, १९; क. आसरि. १४, पृ० १५१; प्रिए. २, फलक ४४, १७-१९।

§ ४८. *काड* (**फलक** ३, ७) :—ब्राह्मी अक्षरों में 'काडस' लेख से युक्त ताँबे के ढले सिक्कों का स्रोत अनिश्चित है। बूहलर ने 'काडस' की 'काड के षष्ठी रूप में व्याख्या की है, और कहा है कि काड एक राजा के नाम का उत्तर-भारतीय रूप है =संस्कृत 'काल' अथवा 'पालि' 'काळ' (काला)। वे इसी समीकरण—उत्तर-भारतीय 'ड' = संस्कृत 'ल'—के लिए गिरनार शिलालेखों में उपलब्ध रूप से तुलना करते हैं, जैसे 'महिडायो' = संस्कृत 'महिलाः' (स्त्री)। क. कऐइ. फलक ५. ६ में चित्रित सिक्का कुणिन्दों के सिक्कों के साथ ही मिला था और इस तथ्य ने कनिङ्घम को इस अनुमान के लिये प्रेरित किया यह कुनेतों की वर्तमान 'कडैक' शाखा के पूर्वजों का हो सकता है (क. काऐइ. पृ० ७१; देखिये § ५० भी)।

क. काऐइ. फलक २, २१. २२; क. आसरि. २, १०; ६, पृ० १६७।

§ ४९. *कोसाम्बी*, अथवा वत्स-पत्तन, इलाहाबाद जिले का एक प्राचीन नगर था (जमुना के तट पर स्थित आधुनिक कोसम के साथ इसके समीकरण और इसके इतिहास की रूपरेखा के लिए देखिए क. ऐज्या. पृ० ३९१)। बड़े ढले सिक्के, जिनकी

'काडस' पाठ से युक्त (देखिये § ४८) सिक्कों के साथ तुलना की जा सकती है सम्भवतः तृतीय शताब्दी ई० पू० जैसे प्राचीन समय के हो सकते हैं (फलक ३, १२, तुकी. क. काऐइ. फलक ५, ७–१०)। अन्य (जैसे क. उस्था. ११–१८) सम्भवतः बाद की दो शताब्दियों के हो सकते हैं। इनके साथ पंचालों के तथा अयोध्या के बाद के सिक्कों की तुलना की जा सकती है (§ ५३. ४४, और क. काऐइ. फलक ७. ९)। उन सिक्कों के लिये, जिन पर 'बहसतिमितस' लेख अंकित है (फलक ३, ११), देखिये पभोसा के 'बहसतिमित' के लेख (फ़्हरेर, एइ. २, पृ० २४०)।

क. काऐइ. पृ० ७३ फलक ५, ७–१८; क. आसरि. १, पृ० ३०१; १०. पृ० ४, फलक २; प्रिए. फलक ८, १२–१५; जबंसो, १८७३, पृ० १०९. १९१।

§ ५०. *कुणिन्द* :—कुणिन्दों का क्षेत्र सतलज के दोनों ओर का वही पहाड़ी जिला रहा हो सकता है जहाँ वर्तमान समय में कुनेत रहते हैं (क. आसरि. १४, १२६)। इनके सिक्के दो समय के हैं। पहले के समय वाले, जिन पर औदुम्बरों की ही भाँति खरोष्ठी और ब्राह्मी दोनों में लेख हैं और जो उन्हीं की भाँति अपलदतस के हेमीड्रेक्म्स (Hemidrachms) के साथ-साथ ही मिलते हैं (देखिये ऊपर § ४३), सम्भवतः १०० ई० पू० के हो सकते हैं (फलक ३. ९)। बादवाले, जिन पर कुषाणों के बड़े ताँबे के सिक्कों का प्रभाव है और जिन पर ब्राह्मी के एक बाद के रूप में लेख हैं, सम्भवतः ईसा की तीसरी या चौथी शताब्दी के हो सकते हैं (फलक ३. १०)। यह तथ्य कि यौधेयों के सिक्के भी स्वाभाविक रूप से इसी समान श्रेणी में आते हैं (§ ६०), ऐसा व्यक्त कर सकता है कि इन हिन्दू राज्यों, और सम्भवतः अन्य का भी, उस समय उदय हुआ जब यूनानियों और कुषाणों की प्रभुता ह्रासोन्मुख हो चली।

क. काऐइ. पृ० ७०, फलक ५, १–५; क. आसरि. १४, पृ० १३७, फलक ३१, ५, ६; रॉजर्स, इम्यूकै. ३, पृ० ९। देखिये एऐ. पृ० ४१३, फलक १५, २३; प्रिए. १, पृ० २०३. २०८, फलक १९, १६; थॉ. जएसो. १८६५, पृ० ४४७; जबंसो. १८७५, पृ० ८९; १८८६, पृ० १६१; प्रो. बंएसो. १८७५, पृ० १६४।

§ ५१. *मालव* :—उन सिक्कों को जिन पर 'मालवानां जयः' लेख पढ़ा गया है पहले प्राचीन माना जाता था। किन्तु इनके लेख की प्रकृति तथा यह तथ्य भी कि इनकी बनावट बहुत कुछ पद्मावती के नागों के सिक्कों के समान है (स्मिथ, जएसो. १८९७, पृ० ६४३; देखिये आगे § १०१), इस बात का संकेत करता है कि ये ईसा की पाँचवीं शताब्दी से पहले के नहीं हो सकते।

क. आसरि. ६, पृ० १६५. १७४; १४, १४९, फलक ३१, १९–२५; फ्लीट, CII, III, भूमिका, पृ० ६७; राजर्स, इम्यूकै. ३, पृ० १५।

§ ५२. *मथुरा* :—मथुरा के पास मिला एक प्राचीन ढला सिक्का, जिस पर ब्राह्मी अक्षरों में 'उपातिक्या' लिखा है, कम से कम तीसरी शताब्दी ई० पू० जैसे प्राचीन समय का है (फलक ३, १७) देखिये क. काऐइ. पृ० ८६, फलक ८, १; और क. आसरि. ३, पृ० १४. ३९। ब्राह्मी अक्षरों से युक्त बलभूति के सिक्के सम्भवतः दूसरी शताब्दी ई० पू० के हैं (क. काऐइ. पृ० ८७, फलक ८, ९)। मथुरा में मिले अन्य हिन्दू राजाओं के सिक्कों के लिये देखिये क. काऐइ. पृ० ८८, फलक ८; और भगवानलाल इन्द्रजी, जएसो., १८९४, पृ० ५५३, फलक १०–१४। भ० इन्हें मथुरा में शक शक्ति के ह्रास के समय, अर्थात् प्रथम शताब्दी ई० पू० के उत्तरार्द्ध का बताते हुये यह मानते हैं कि ये मथुरा के शक क्षत्रपों के सिक्कों के अनुकरण हैं (§ ३२); किन्तु इनमें से रामदत्त के कुछ सिक्के (फलक ४, १; क. काऐइ. फलक ८, १३; और भ. जएसो. १८९४, फलक १४) निःसन्देह कुछ पहले के प्रतीत होते हैं क्योंकि इनके पृष्ठ भाग पर ऐसी चौकोर आकृति है जो पंचाल (शुङ्ग, § ५३) की विशिष्टता है। ठप्पे की समानता—एक चैत्यवृक्ष—की तथा पुरालेखशास्त्र की दृष्टि से बलभूति के सिक्के बहसतिमित (§ ४९) के सिक्कों के साथ सम्बद्ध हैं। ये तथ्य यह दिखाते प्रतीत होते हैं कि कम से कम कुछ हिन्दू राजा उन शक क्षत्रपों के पहले हो चुके थे जिनके सिक्कों का उन क्षत्रपों ने अनुकरण किया।

§ ५३. *पञ्चाल* (फलक ३. १६) :—जिन सिक्कों को इस शीर्षक के अन्तर्गत

2260

व्याख्या की गई है उन्हें शुङ्ग या मित्र वंशी कहा गया है, और इस बात के लिए कोई निश्चित आधार नहीं है कि इन्हें आज भी इस वर्ग के अन्तर्गत न रक्खा जाय। इस समीकरण को प्रभावित करनेवाली कठिनाइयाँ ये हैं : (१) यह तथ्य कि अधिकांश सिक्के उत्तर पंचाल की प्राचीन राजधानी, रुहेलखंड, में मिलते हैं, जब कि अन्य तथ्य पूर्वी मालवा के शुङ्गशक्ति का केन्द्र होने की ओर संकेत करते हैं; (२) यह तथ्य कि इन सिक्कों पर आनेवाले एक दर्जन नामों में से केवल एक अग्निमित्र का ही नाम पुराणों में दी हुई शुङ्ग वंश की तालिकाओं में आता है। दूसरी ओर, नाम के विन्यास, जिनका सामान्यतया '–मित्र' से अन्त होता है, दोनों दशाओं में समान हैं, और सिक्कों की शैली और उनका पुरालेख शुङ्गकाल के समान है जिसका पुराणों के आधार पर १७६–६६ ई० पू० समय निश्चित किया गया है। सम्भवतः इन सिक्कों तथा अयोध्या में मिले 'मित्र' सिक्कों (देखिये ऊपर § ४४) में भी सम्बन्ध है। इन पंचाल (शुङ्ग) सिक्कों पर लेख ब्राह्मी अक्षरों में है। इनकी बनावट की विशिष्टता के लिए देखिये ऊपर § ५२।

क. काऐइ. पृ० ७९, फलक ७; कार्लेइल, जबंसो, १८८०, पृ० २१; रिबेट-कार्नेक, वही पृ० ८७; राजेन्द्रलाल मित्र, प्रो. बंएसो. १८८०, पृ० ८।

§ ५४. *पुरी और गञ्जम* :—उड़ीसा के पुरी जिले तथा मद्रास प्रान्त में गंजम जिले के आस-पास काँसे के एक विचित्र वर्ग के सिक्कों के अनेक नमूने मिले हैं। इन पर कोई लिखावट नहीं है; किन्तु इनके ठप्पे प्रत्यक्षतः कनिष्क के समय के कुषाण-सिक्कों से (§ ७३)—जैसे अग्रभाग पर राजा की खड़ी मूर्त्ति और पृष्ठ भाग पर किसी देवता की मूर्त्ति—लिये गये हैं। खोज के अंकित विवरण के आधार पर पुरी जिले में मिले ये सिक्के ठप्पों से साधारण रूप से बने कुषाण-सिक्कों के साथ-साथ मिले हैं। इस तथ्य से ऐसी सम्भावना प्रतीत हो सकती है कि ये दोनों वर्ग—ठप्पे से बने मूल और ढले अनुकरण—एक ही समय में चलते रहे होंगे। फिर भी, यह भी एक तथ्य है कि कुषाण-सिक्के, नियमित रूप से, भारत के इतने पूर्व अथवा दक्षिण के भागों में नहीं मिलते जितने पुरी तथा गंजम हैं; और यह मत व्यक्त किया गया है कि इन जिलों में इनके मिलने

०७६२

का कारण यह है कि तीर्थ-यात्री दूरस्थ देशों से इन्हें पुरी के मन्दिरों में चढ़ाने के लिए लाये थे। अतः सम्भव है कि ढले अनुकरण भी इसी उद्देश्य से बनाये गये हों, और इसलिये इन्हें सिक्के नहीं वरन्, बाद के समय के रामटङ्कों की भाँति, मन्दिर में चढ़ाये जाने की वस्तु मानना चाहिये। दोनों ही दशाओं में ये कुषाण-काल की उस अवधि के बीच के ही प्रतीत होते हैं जो कनिष्क के शासन तथा उसके अन्त के बीच की अवधि है।

पुरी जिले में मिले सिक्कों के लिये देखिये हॉर्नले, प्रो. बंएसो. १८९५, पृ० ६१, फलक २; गञम जिले में मिले सिक्कों के लिये देखिये इलियट, न्यूमिस्मैटिक ग्लीनिङ्गस, पृ० ३३ = जमसो. २० (न्यू सीरीज़, ४), पृ० ७५।

§ ५५. *सिबि* = क्विन्टस कर्टियस (१०, ४) के सोब्राई, चित्तौड़ के आस-पास के निवासी। उन सिक्कों के लिये जिन पर यह नाम पढ़ा गया है—फिर भी, इनके पाठ को निश्चित नहीं माना जा सकता—देखिये क. आसरि. ६, पृ० २०४; १४, पृ० १४६, फलक ३१, १३. १४।

§ ५६. *तक्षिला*, जो रावलपिण्डी जिले में स्थित आधुनिक शाहधेरी अथवा धेरी शाहान् है (क. ऐज्या. पृ० १०४)। प्राचीनतम समय के सिक्कों के लिए देखिये ऊपर §§ ४–६। ठप्पा लगाने की कला यहाँ भारत के अन्य भागों की अपेक्षा पहले से ज्ञात प्रतीत होती है। आरम्भिकतम नमूनों पर केवल एक ओर ही ठप्पा लगा है, और इसकी विधि भी विशिष्टतः भारतीय है जिसके अनुसार धातु पर उसी समय ठप्पा लगाया जाता था जब वह अर्ध-तरल अवस्था में होता था, और इसके परिणामस्वरूप ठप्पे का निशान एक गहरे चौकोर गढ्ढे में स्थित हो जाता था। पंचाल (§ ५३) और त्रिपुरी (§ ५७) के सिक्के इस विधि के अन्य उदाहरण हैं (भ. जएसो १८९४ पृ० ५५३)। तक्षिला के आरम्भिक चौकोर ठप्पोंवाले सिक्कों (फलक १, ११) से ही यूनानी राजाओं, पन्तलेव और अगथुक्लेय, १९० ई० पू० (फलक १, १२, पन्तलेव) के ताँबे के सिक्कों का अनुकरण किया गया है। इस काल के अन्य सभी यूनानी सिक्कों की भाँति इन पर भी दोनों ओर ठप्पे लगे हैं; और तक्षिला के दोहरे ठप्पेवाले सिक्कों का

निर्माण, जिनकी कला पर निश्चित रूप से यूनानी प्रभाव है, सम्भवतः इन्हीं से प्रभावित है (फलक १. १३)। दोहरे ठप्पेवाले सिक्कों के बाद वहाँ मास (Maues) के सिक्कों का प्रचलन हुआ, जिसने सम्भवतः द्वितीय शताब्दी ई० पू० के लगभग तक्षिला को विजित कर लिया। कनिङ्घम तक्षिला के ताम्रपत्र के 'छहरा [त] चुक्ष' को एक नाम = तक्षिला (ऐज्या पृ० १०९) के रूप में व्याख्या करते हुए 'लियक कुसुलुक' (Liaka Kusuluka) को तक्षिला में मास (Maues) का एक शक क्षत्रप मानते हैं।

क. काएेइ. पृ० ६०, फलक २. ३; क. आसरि. १४, पृ० १६, फलक १०; एएे. फलक १५, २६-३१।

§ ५७. *त्रिपुरी* अथवा *त्रिपुर*, जबलपुर जिले के तेवर का प्राचीन नाम है (क. आसरि. ९, पृ० ५४)। सम्भवतः तीसरी शताब्दी ई० पू० के ब्राह्मी अक्षरों में लि[खे] इस नाम से युक्त सिक्कों के लिये देखिये भ. जएसो. १८९४, पृ. ५५३, फलक १५।

§ ५८. उज्जेन :—यहाँ के आरम्भिकतम सिक्के, जिन पर ब्राह्मी अक्षरों [में] 'उजेनिय' लिखा है, सम्भवतः दूसरी शताब्दी ई० पू० के हैं (फलक ४, ५)। अभी तक ज्ञात अन्य सिक्कों पर कोई लेख नहीं है, और उन पर एक ऐसा चिह्न बना [है] जो यद्यपि यहीं तक सीमित नहीं है, तथापि इस जिले की विशिष्टता प्रतीत होता [है] (फलक ४, ६)। किसी सन्तोषजनक काल-निर्धारण के लिये इनके द्वारा पर्याप्त आँकड़े उपलब्ध नहीं होते।

क. काएेइ. पृ० ९४, फलक १०; क. आसरि. पृ० १४८, फलक ३१, १६; जबंसो, १८३८, पृ० १०५४, फलक ६१, २. २२।

§ ५९. वटस्वक (फलक ३, ६) :—ब्राह्मी अक्षरों में इस लेख से युक्त औ[र] पन्तलेव तथा अगथुक्लेय (१९० ई० पू०) के चौकोर ताँबे के सिक्कों के समान [इन] सिक्के ठप्पे के समीकरण के आधार पर तक्षिला के आस-पास मिले 'इकहरे-ठप्पों' वा[ले] सिक्कों (तुकी. क. काएेइ. फलक २, न० १७, नोट १४ सहित) के साथ भी सम्ब[न्ध]

ASHOKNAGAR MANGALORE-6. 6902

हैं। यतः पन्तलेव और अगथुक्लेय के सिक्के इन्हीं 'इकहरे ठप्पों' वाले सिक्कों के अनुकरण हैं, अतः वटस्वक सिक्कों का समय सम्भवतः कम से कम २०० ई० पू० जैसा प्राचीन होना चाहिये। बूहलर ने इस नाम की अश्वक जाति के 'वट' (अथवा वट वृक्ष) उपजाति का द्योतक होने के रूप में व्याख्या की है (इस्ट. ३, पृ० ४६)।

अश्वक = Ασσακηνοι के लिये अरियन, अनब. ४. २५, और इण्डिका, १, १। तुकी लइ० २, पृ० १२९; क. न्यूक्रा. १८९३, पृ० १०० भी।

§ ६०. *यौधेय* :—यौधेयों को बहावलपुर के आधुनिक जोहियों के साथ समीकृत किया गया है (क. ऐज्या. पृ० २४५), किन्तु प्राचीन समय में इनका क्षेत्र अधिक विस्तृत था। इनके सिक्कों को कालक्रम की दृष्टि से इस प्रकार व्यवस्थित किया जा सकता है : (१) छोटे ताँबे के सिक्के जो यद्यपि निर्माण-कला की दृष्टि से कुछ भद्दे हैं, तथापि जिनकी अन्य दृष्टियों से औदुम्बरों (§ ४३) और कुणिन्दों (§ ५०) के १०० ई० पू०, (**फलक ३, १३**) के आरम्भिक सिक्कों के साथ तुलना की जा सकती है; (२) बड़े ताँबे के सिक्के, जिनकी बनावट तथा ठप्पे, दोंनों पर कुषाणों का प्रभाव व्यक्त होता है (**फलक ३, १४**); इन सिक्कों पर छः सर वाले किसी देवता, सम्भवतः कार्तिकेय, का ठप्पा है और ये कुछ बाद के हैं (**फलक ३, १५**)।

क. काऐइ. पृ० ७५, फलक ६; क. आसरि. १४, १३९, फलक, ३१, ७-१२; प्रिन्सेप, जबंसो. १८३४, फलक २५, ४. ५; प्रिए. फलक ४, ११. १२; फलक ७, ४; फलक १९, ५. ६. ९. १०. २२; फलक २१, १६. १७। समुद्रगुप्त के सहायक यौधेयों के लिये : फ्लीट, CII, III, पृ० १४. २५१।

७. भारतीय-पार्थियन सिक्के

§ ६१. *भारतीय-पार्थियन वंश का समय* :—ऐसा प्रतीत होता है कि भारतीय पार्थियन वंश, जिसका सर्वपरिचित सदस्य गोन्डोफरस (Gondophares) था, कन्दहार तथा सीस्तान में वोनोनस का उत्तराधिकारी हुआ, और इसने एक समय अपने

अधिकारक्षेत्र को पूर्व में उस पश्चिमी पंजाब तथा सिन्ध तक बढ़ा लिया जहाँ इसके पहले मास (Maues) का साम्राज्य था (देखिये ऊपर § २९; क. न्यूका. १८९०, पृ० १२२)। इसकी कालक्रमगत सीमा यह है : (१) इस वंश की स्थापना १ ई० पू० के बाद हुई प्रतीत होती है (गुई०. पृ० १३४); और (२) इसके बाद के राजाओं में से एक, सनबरस (Sanabares), ७७ ई० के बाद हुआ (फान साले, त्सीन्यू. १८७९, पृ० ३६४)। अस्पवर्मा के नाम से युक्त एक सिक्का (देखिये ऊपर § ३४), गोन्डोफरस तथा अजेस (§ ३१) की दो शाखाओं से एक अज्ञात प्रकार से सम्बद्ध है : देखिये रॉजर्स, न्यूका. १८९६, पृ० २६८।

गा. पार्थियन कॉयनेज, पृ० ४६ (देखिये ड्रन्यू. १८९५, पृ० ४६), सनबरस को 'फ्राएटसस' (Phraataces), ई० पू० ३–४ ई०, का समकालीन बताते हैं। फिर भी यह सनबरस के एक सिक्के पर पड़ी $\Gamma I T$ तिथि सैल्यूकस संवत् ३१३ = १ ई० के पाठ पर निर्भर है (थॉ सस्सेनियन इन्सक्रिप्शन्स, १८६८, पृ० १२१); और मारकॉफ, जेरसो. १८९२, पृ० २९७ (न्यूका. १८९३, पृ० २१८ भी) यह दिखाते हैं कि इस पाठ की पुष्टि नहीं की जा सकती।

§ ६२. *गोन्डोफरस* :—गोन्डोफरस के शासनकाल के प्रथम वर्ष को २१ ई० मानना उसके तख़्त-ए-बही अभिलेख में १०३ तिथि को विक्रम संवत् मानने पर निर्भर है।

क. न्यूका. १८९०, पृ० ११८; मारकॉफ, रसो. १८९२, पृ० २९३, अलोचना ड्रन्यू. १८९३, पृ० ११९, और रैपसन, न्यूका. १८९३, पृ० २१७।

चाहे यह पद्धति उचित हो या नहीं, परिणाम सिक्कों के यूनानी लेखों के पुरालेख-शास्त्र (फा. पृ० XLVI) तथा अन्य संकेतों के सर्वथा अनुकूल है।

इस वंश के सिक्कों के लिये : गा. पृ० १०३, फलक २२. २३; फान साले, त्सीन्यू. १८८०, पृ० २९६; १८८१, पृ० १११; क. न्यूका. १८९०, पृ० १५८, फलक १३. १४; मारकाफ, उपु. फलक ४, २५–३१; प्रिए. २, पृ० २१५। बाँये से दाहिने खरोष्ठी में

लिखे अंश से युक्त अब्दगसस (Abdagases) का सिक्का : हॉर्नले, प्रो. बंएसो. १८९५, पृ० ८३। सेन्ट थॉमस के गुण्डोफोरस के साथ गोन्डोफरस के समीकरण के लिये : गुफ. XIX, पृ० १६१; तुकी. गुई. पृ० १३४; गा. पृ० XLIII; प्रिए. २, पृ० २१४, भी।

§ ६३. *जिन सिक्कों के स्रोतों का गलत निर्धारण किया गया है* :—भारतीय-पार्थियन शब्द को थॉ. (जएसो. १८७०, पृ० ५०३ = न्यूक्रा. १८७०, पृ० १३९ = संवर्द्धित सामग्री के साथ, आवेइ. १८७४–७५ 'काठियावाड़ और कच्छ', पृ० ५२ = गुप्तवंश, आदि, पृ० ३७) ने कुछ ससेनियन बनावट के ऐसे सिक्कों के लिये व्यवहृत किया है जिन्हें अधिक सम्भवतः किसी ऐसे वंश—कदाचित एफथेलिटीज (Ephthalites) अथवा इनके तुर्क विजेताओं का मानना चाहिये जो भारत के उत्तर के क्षेत्र पर ईसा की छठवीं शताब्दी के बाद शासनारूढ़ थे।

रैपसन, न्यूक्रा. १८९६, पृ० २४६। तुकी. मारकॉफ, रसो. १८९२, पृ० २९८, फलक ४, ३२. ३३ (आलोचना रिन्यू. १८९३, पृ० १३०; और न्यूक्रा. १८९३, पृ० २१९)। पुरालेखशास्त्र के लिये देखिये : ड्रूइन, जए. १८९१ (१७), पृ० १४८ = रिन्यू. १८९१, पृ० २२२।

८. कुषाण सिक्के

§ ६४. *परिभाषा* :—यतः 'कुषाण' शब्द के अशुद्ध प्रयोग के कारण कभी-कभी पर्याप्त अस्तव्यस्ता उत्पन्न हो जाती है, अतः हमें यह ध्यान रखना चाहिये कि प्रयोग-समय की दृष्टि से यह दो स्पष्ट तथ्यों का द्योतक है :—(१) कुषाण मूलतः उन युह-ती लोगों के पाँच कबीलों में से एक थे जो १२० ई० पू० तक बैक्ट्रिया तथा परोपनिसस (Paropanisus) के उत्तरवर्ती और अन्य आस-पास के क्षेत्रों की प्रमुख शक्ति बन चुके थे; (२) २५ ई० पू० तक इस विशेष कबीले (कुषाण) ने युह्-ती के अन्य चार कबीलों पर प्रभुत्व प्राप्त कर लिया था, और इस समय के बाद 'कुषाण' शब्द इनके ही नेतृत्व में एकत्र समस्त युह्-ती जाति का द्योतक बन गया। पहले पृथक्, तथा सम्भवतः

परस्पर असंगत युह्-ती शक्तियों की एकता का प्रथम परिणाम काबुल घाटी में हरमियस के अन्तर्गत अन्तिम यूनानी साम्राज्य पर विजय के रूप में प्रगट हुआ।

स्पेख्त, जए. १८८३ (२), पृ० ३१७; थॉ. इऐ. १८८६, पृ० १९; क. न्यूक्रा. १८८९, पृ० २६९; १८९२, पृ० ४१। किन्तु देखिये एस. लेवी, जए. १८९७, पृ० १ और बाद।

§ ६५. *हरमियस, कुजुल कडफाइसिस*—हरमियस के साम्राज्य पर कुषाण-विजय की प्रगति का मुद्राशास्त्रीय प्रमाण पूर्ण रूपेण उपलब्ध है। सिक्कों से घटनाक्रम इस प्रकार व्यक्त होता है :—(१) अकेले हरमियस (गा. पृ० ६२); (२) हरमियस के साथ सम्बद्ध कुजुल कडफाइसिस: जैसे अग्रभाग: *EPMA□Y*, पृष्ठभाग : खरोष्ठी में कुजुल कसस (**फलक** २, ७; तुकी. गा० पृ० १२०); (३) अकेले कुजुल कडफाइसिस: जैसे अग्रभाग *K□Z□VΛ□ KAΔΦIZ□V*, पृष्ठभाग, कुजुल कसस (**फलक** २, ८; तुकी. गा. पृ० १२२)। कुजुल कडफाइसिस (=चीनी में क्यू-त्सीओ-खिओ) की मृत्यु ८० वर्ष की अवस्था में १० ई० में हुई बताई गई है और भारत, अर्थात् पञ्जाब तथा पूर्व में जमुना तक के क्षेत्र के विजय का श्रेय इसके उत्तराधिकारी को दिया गया है (स्पेख्त, जए. १८८३, (२), पृ० ३२५)।

ड्रून्यू. १८८८, पृ० २३; क. न्यूक्रा. १८९२, पृ० ४५, कुजुल कडफाइसिस का समय कुछ बाद, अर्थात् १० ई० पू०, मानते हुये विम कडफाइसिस को उसका उत्तराधिकारी (३० ई०) मानते हैं। हरमियस तथा कुजुल कडफाइसिस के सिक्कों के यूनानी लेखों के लिये देखिये रैपसन, जएसो. १८९७, पृ० ३१९।

§ ६६. कुषाण वंश के इस द्वितीय राजा के सिक्कों का निर्धारण अभी बहुत निश्चित नहीं है। अनेक लेखकों ने इसे उस राजा के साथ समीकृत किया है जिसके सिक्के ४ ई० पू०—२ ई० की अवधि के आगस्टस के प्रत्यक्ष अनुकरण हैं (फान साले, त्सीन्यू. १८७९, पृ० ३७८) और जिनके अग्रभाग पर *KOZOΛA KAΔΛΦEΣ*, तथा पृष्ठभाग पर कुयुल कफसस (**फलक** २, ९) लिखा है (तुकी. गुई. पृ० १३६; गा. पृ० XLVIII; ड्रून्यू. १८८८, पृ० ४६)। फिर भी, कनिङ्घम यह मानते हुये कि

रोमन शैली के ये सिक्के कुजुल कडफाइसिस की किसी टकसाल विशेष में बने हैं, इनके लेख के अन्तर की यूनानी अथवा खरोष्ठी में कुषाण नाम को व्यक्त करने की कठिनाई के द्वारा व्याख्या करते हैं (न्यूक्रा. १८९२, पृ० ४६)।

६७. *नामविहीन राजा* :—उस 'नामविहीन राजा' के सिक्कों का विवेचन करने का यह, सम्भवतः, सर्वोपयुक्त स्थान है जिसके लेख हमें केवल ऐसी ही सूचना प्रदान करते हैं, जो दुर्लभ रूप से कभी-कभी खरोष्ठी अनुवाद से युक्त *BACIΛєYC BACIΛєYωN CωTHP MєΓAC*, जैसी उपाधि से व्यक्त होती है (फलक २, १०, तुकी. गा. पृ० ११४)। इसके साम्राज्य-विस्तार की सीमा इस तथ्य द्वारा व्यक्त होती है कि इसके सिक्के प्रचुरता के साथ सम्पूर्ण पञ्जाब, तथा कन्दहार और काबुल-घाटी में भी मिलते हैं (क. न्यूक्रा. १८९०; पृ० ११५)। इन सिक्कों की बनावट और पुरालेखशास्त्र का विचार करने पर कुछ तथ्य निष्कृष्ट हो सकते हैं। एक ओर, ये ठप्पे की समानता, पृष्ठभाग अश्वारोही, और "Reel तथा Bead" के हाशिये (तुकी. फलक २, १ तथा १० सहित; क. न्यूक्रा. १८९०, फलक १२, १, ४ सहित; गा. फलक २४, ७, ६ सहित की दृष्टि से मियोस (Miaus) (§ ३५) के साथ सम्बद्ध हैं; और, दूसरी ओर, यूनानी लेखों में अधिक सामान्यतः प्रयुक्त षष्ठी विभक्ति के स्थान पर प्रथमा के प्रयोग, यूनानी उपाधि *σωτηρ μεγας* के प्रयोग द्वारा, तथा यूनानी और खरोष्ठी दोनों में लिखे कुछ अक्षर-रूपों की समानता के द्वारा विम कडफाइसिस (§ ६९) के साथ सम्बद्ध हैं (क. न्यूक्रा. १८९२, पृ० ७१)। इसके अतिरिक्त, 'नामविहीन राजा' एक ऐसे चिह्न का प्रयोग करता है जो विम कडफाइसिस तथा उसके उत्तराधिकारियों की विशिष्टता है। और कनिङ्घम (न्यूक्रा. १८९२, फलक ५, १४) द्वारा प्रकाशित एक अद्वितीय सिक्के पर दो मुखोंवाली आकृति और दोनों मुखों के सामने क्रमशः 'नामविहीन राजा' तथा विम कडफाइसिस (क. न्यूक्रा १८९२, पृ० ७१) के चिह्न हैं। समय की दृष्टि से इन दोनों के निकट सम्बन्ध पर सन्देह नहीं किया जा सकता; किन्तु एक ही वंश के दो सदस्यों के रूप में भी ये सम्बद्ध थे अथवा नहीं यह निश्चित नहीं है। कनिङ्घम 'नामविहीन राजा' को शकों के अन्तर्गत रखते हुये (न्यूक्रा. १८९०, पृ० ११४) यह भी व्यक्त करते हैं कि बिना नाम के ये

सिक्के आरम्भिक कुषाण राजाओं के क्षत्रपों, सम्भवतः कडफाइसिस, ने ही चलाये थे। गुई. (पृ० १३६) कोजोल कडफिस और बाद के विम कडफाइसिस के बीच के मुद्राशास्त्रीय व्यवधान को स्वीकार करते हुये इस नामविहीन राजा को इसी बीच की अवधि में रखते हैं, और इसे एक भारतीय राजा—आग्निवेश्य राजा—मानते हैं जो गार्गी संहिता (कर्न, बृहत्संहिता ३९) के अनुसार दो शक वंशों के बीच की अवधि में २० वर्षों तक भारत पर शासन करता रहा। कनिङ्घम ने भी कुछ इसी प्रकार के दृष्टिकोण का औचित्य देखा और यह विचार व्यक्त किया कि खरोष्ठी 'वि', जो इन अनेक सिक्कों पर आता है (जैसे, क. न्यूक्रा. १८९०, फलक १२, ४), विक्रमादित्य (उस्था. पृ० ११५) का संक्षिप्तरूप हो सकता है। फिर भी, यहाँ यह कहा जा सकता है कि यदि इस 'नामविहीन राजा' का विक्रमादित्य के साथ कोई इस प्रकार का समीकरण सम्भव है तो विक्रम संवत् का आरम्भ, जो ५७ ई० पू० से आरम्भ होती है, यदि हमारा इस अवधि का काल-क्रम ठीक है तो, इसके जन्म के समय से ही मानना होगा।

§ ६८. *कुजुल कर कडफाइसिस* :—इस राजा को, जो 'देवपुत्र' की कुषाण उपाधि धारण करता है, कनिङ्घम ने कुजुल कडफाइसिस का पुत्र तथा विम कडफाइसिस का पूर्वज माना है।

न्यूक्रा. १८९२, पृ० ६२, फलक ४२, ३–१३। पृ० ४५ की कालक्रम-तालिका में इसे विम कडफाइसिस के बाद और कनिष्क के पहले रक्खा गया है।

फिर भी, सामान्यतया यह मान लिया गया है कि नाम के इस रूप से युक्त सिक्के कुजुल कडफाइसिस के सिक्कों के ही एक प्रकार हैं (देखिये ऊपर § ६५); और इस मान्यता के पक्ष में, जो इन्हें कुछ और पूर्व के समय का स्थिर करती है, यह कहा जा सकता है कि बनावट और ठप्पे की दृष्टि से ये जियोनिसस (Zeionises) के सिक्कों के समान हैं (देखिये ऊपर § ३४; तुकी. गा. फलक २३, ५, जियोनिसस, ७ के साथ, कुजुल कर कडफाइसिस)।

§ ६९. *विम कडफाइसिस* :—इस स्थल से ईसा की द्वितीय शताब्दी के अन्तिम

चतुर्थांश तक भारतीय कुषाण राजाओं का उत्तराधिकार-क्रम निश्चित है। विम कडफाइसिस, जिसे चीनी विवरणों में येन-काओ-चिङ्ग के साथ समीकृत किया गया है (३० ई०–७८ ई०; फलक २, ११), सर्वप्रथम सुवर्ण-सिक्के चलानेवाले राजा के रूप में अपने उत्तराधिकारियों से सम्बद्ध है। सुवर्ण-सिक्कों के इस क्रम को ईसा की चतुर्थ शताब्दी में उत्तर भारत का प्रभुत्व हाथ में आ जाने पर गुप्तों ने भी जारी रक्खा। यूक्रेतिदस के दो या तीन सोने के सिक्के (रिन्यू, १८६७, पृ० ३८२; न्यूक्रा १८९२, पृ० ३७; फलक ३, ११), एक मिनेन्डर के (क., यह अब ब्रिटिश म्यूजियम में है), सम्भवतः तक्षिला के एक (क. काऐइ फकक २, १८), और एक अनिश्चित स्रोत के (गा. पृ० १६२, फलक २९, १५, देखिये ऊपर § ३७ (१)), सिक्कों को छोड़कर सिक्कों के वर्तमान भारतीय संग्रह में किसी भी ऐसे सुवर्ण-सिक्कों के उदाहरण नहीं है जिन्हें विम कडफाइसिस के समय से दो शताब्दी पूर्व भारत में बनाया गया हो। कुषाणों के सोने के बड़े सिक्कों के प्रचलन का इस समय भारत में रोमन सोने के आगमन को कारण बताया गया है।

क. न्यूक्रा. १८८८, पृ० २१९, और वहाँ प्लिनी का उद्धृत स्थान, हिने. १२, ४१ (१८)।

§ ७०. यह निश्चित है कि रोमन भार-मानक (aureus ऑरियस = १२४ ग्रेन अथवा ८.०३५ ग्राम) को इसी समय भारत में ग्रहण किया गया था। दो (ऑरेई Aurei) वजन के टुकड़ों पर विम कडफाइसिस ने ही ठप्पा लगवाया था। इसके उत्तराधिकारियों के बड़े से बड़े सोने के सिक्के ऑरेई ही हैं।

इन बाद के कुषाण सोने के सिक्कों के वजन की तालिका के लिये देखिये, क. कामेइ. पृ० १६।

§ ७१. विम कडफाइसिस के सिक्कों के लेख यूनानी तथा खरोष्ठी दोनों में ही हैं, जब कि इसके बाद के तीन उत्तराधिकारियों के केवल यूनानी में। तदुपरान्त यूनानी

लिखावट, जो अब बोधगम्य नहीं रह गई है, के स्थान पर नागरी अक्षरों तथा मिश्रित अक्षरों का प्रयोग किया गया है। (देखिये आगे § ७४)।

असामान्य खरोष्ठी लिखावटवाले विम कडफाइसिस के सिक्कों के लिये देखिये हॉर्नले, प्रो. बंएसो. १८९५, पृ० ८२।

§ ७२. *कनिष्क, हुविष्क, वासुदेव* :—सामान्यतया शक संवत् का आरम्भ ७८ ई० में मथुरा में कनिष्क के अभिषेक से माना गया है (ऑल्डेनबर्ग, त्सीन्यू. १८८१, पृ० २९२ = इऐ. १८८१, पृ० २१४); और कनिष्क, हुविष्क तथा वासुदेव के कुछ शिलालेखों में उपलब्ध तिथियों को इसी संवत् से सम्बद्ध बताया गया है। यदि यह मान्यता ठीक है तो ज्ञात तिथियाँ इस प्रकार होंगी : कनिष्क, वर्ष ७–२८ = ई० ८५–१०६; हुविष्क, वर्ष ३३–६४ = ई० १११–१४२; वासुदेव, वर्ष ७४–९८ = ई० १५२–१७६।

क. न्यूक्रा. १८९२, पृ० ४९। यह माना जाता था कि वासुदेव की शिलालेखीय तिथियों का समय और पहले आरम्भ होता है जिससे उसके शासनकाल का प्रथमांश हुविष्क के अन्तिमांश के समकालीन हो जाय; परन्तु कनिङ्घम (उस्था.) यह मत व्यक्त करते हैं कि यह दशमलव संख्या ७० के ४० के रूप में मिथ्या पाठ के कारण हो सकता है। ब्राह्मी लिपि में लिखे हुविष्कके सिक्कों के लिये देखिये, स्मिथ, ज्रबंसो, १८९७, पृ० ३।

फिर भी, कनिङ्घम यह तर्क प्रस्तुत करते हुये कि कनिष्क एक शक नहीं वरन् कुषाण राजा था (देखिये ऊपर § ६४), शक संवत् के आरम्भ का अन्य स्रोत निश्चित करते हैं (वे इसे चष्टन द्वारा स्थापित मानते हैं) और कुषाण-तिथियों को सैल्यूकस संवत् (ई० पू० ३१२) से सम्बद्ध मानते हैं जिनमें शतांशों को छोड़ दिया गया है (जैसे वर्ष ७ = ४०७ सैल्यूकस संवत् = ९५ ई०)। यह पद्धति ऊपर दी हुई समस्त कुषाण तिथियों को दस वर्ष बाद का बना देगी। कनिङ्घम इस तथ्य के आधार पर इसका समर्थन करते हैं कि अपने लेखों में कुषाण लोग भारतीय नहीं वरन् मेसिडोनियन मासों के नाम

का व्यवहार करते हैं (न्यूक्रा. १८९२, पृ० ४४); तुकी. भण्डारकर (हिडे. पृ० २६ और बाद) भी। अन्य सम्भावना, जैसे यह कि कनिष्क तथा उसके उत्तराधिकारियों द्वारा प्रयुक्त तिथियों से शोडास, लियक कुसुलुक (Liako Kusuluka) तथा अन्य द्वारा प्रयुक्त संवत् की द्वितीय शताब्दी का तात्पर्य है, देखिये वीमा ९, पृ० १७३ और बाद।

§ ७३. *धार्मिक ध्वज* (Emblems) :—इस काल के धार्मिक इतिहास को व्यक्त करने के रूप में कनिष्क तथा हुविष्क के सिक्कों का पर्याप्त महत्त्व है। इनमें उल्लेखनीय चयनात्मकता लक्षित होती है, क्योंकि इनके पृ० भाग पर यूनानी तथा शक देवता, अवस्ता तथा वेद के देवता, और बुद्ध के चित्र हैं।

आरम्भिक महान् कुषाणों के सिक्कों के लिये : क. न्यूक्रा. १८९२, पृ० ६३, फलक ४-८; वहीं पृ० ९८ : फलक ९-१४; गा. पृ० XLVIII, १२०, फलक २५-२९; फान साले, त्सीन्यू. १८७९, पृ० ३७७। तुकी. एऐ. पृ० ३४७, फलक १०। कालक्रम के लिये : ड्र्न्यू. १८८८, पृ० ८. १८५; गुई.पृ० १३६. १६४। यूनानी अक्षरों के कुषाण परिमार्जन : स्टीन, बेओरे. १८८७, पृ० १५५; क. वही, १८८८, पृ० ४०। सिक्कों पर प्रस्तुत देवता : स्टीन, उपु. = इऐ. १८८८, पृ० ८९; क. न्यूक्रा. १८९२, पृ० ६१. १२८; थॉ. जएसो. १८७७, पृ० २०९; हॉफमैन, अमा. १८८१, पृ० १३९; गा. पृ० LX; रैपसन, जएसो. १८९७, पृ० ३२२, *OII|OO* के 'शिव' के नाम के रूप में पाठ के लिये।

§ ७४. *बाद के महान कुषाण* :—१८० ई० में वासुदेव की मृत्यु के पश्चात् कुषाणों के सोने तथा ताँबे के सिक्के तो चलते रहे किन्तु यूनानी लेख अब कोई सूचना प्रस्तुत नहीं करते। इन्हें केवल यन्त्रवत् दुहराया गया है और ये शीघ्रता से घिस कर भ्रष्ट तथा अस्पष्ट हो जाते हैं। सिक्कों के पृष्ठ भाग पर केवल अकेले दो या तीन नागरी अक्षर या मिश्रित अक्षर मिलते हैं। इसमें सन्देह नहीं कि अपने समय में ये महत्वपूर्ण संक्षेपाक्षर रहे होंगे, परन्तु आज इनकी व्याख्या की समस्त आशा इस समय के कुछ और लेखों की खोज में ही निहित है। १८० ई० से ४२५ ई०, जो गान्धार में किदार शाह के बसने का समय है (§ ७६), के बीच की दीर्घ अवधि में ये सिक्के संभवतः काबुल

घाटी तथा पंजाब दोनों ही स्थानों की मुद्रायें थे। इन अवधि-सीमाओं के अन्तर्गत विभिन्न वर्गों के सापेक्षिक समय का उन मूल स्रोतों के साथ उनकी दूरी या नैकट्य के आधार पर निर्धारण किया जा सकता है जिनके ये अनुकरण थे। इस प्रकार कनिङ्घम का 'ए' वर्ग (न्यूक्रा. १८९३, पृ० ११५, फलक ८), जिस पर कनिष्क तथा वासुदेव के नाम आज भी पढ़े जा सकते हैं, निःसन्देह उनके उस वर्ग 'बी' (वही पृ० १२०, फलक ९) से प्राचीन है जिस पर यूनानी अक्षरों के केवल कुल चिह्न मात्र बच रहे हैं। इनके स्थान के सम्बन्ध में भी आधार निश्चित किये जा सकते हैं:—(१) वासुदेव (**फलक** २, १२) के आरम्भिक कुषाण ठप्पों से निष्कृष्ट और पृष्ठभाग पर *OII|ϷO* के ठप्पे तथा शिव और नन्दी की आकृति से युक्त सिक्के (**फलक** २, १३) कदाचित काबुल घाटी के हैं : शक- ससेनियनों ने इनका अनुकरण किया था (§ ७५); (२) *ΛPΔOXϷO* के ठप्पे तथा बैठी हुई देवी की आकृति से युक्त सिक्के (**फलक** २, १४) कदाचित् कुषाण साम्राज्य के अपेक्षाकृत अधिक पूर्वी क्षेत्रों के हैं : इनका किदार कुषाणों (§ ७६) तथा गुप्तों (§ ९१; क. न्यूक्रा. १८९३, पृ० ११५—अपने वक्तव्य की शैली के कारण वे इसके विपरीत कहते हुए प्रतीत होते हैं) ने अनुकरण किया था। यह प्रकार सम्भवतः पहले के कुषाणों से निष्कृष्ट है (जैसे गा. फलक २६, १८ : कनिष्क)। फिर भी, यह निश्चित है, क्योंकि इस प्रकार के उन सभी सिक्कों का, जिन्हें पहले के कुषाणों का कहा गया है, स्वरूप बाद का है, और यह सम्भव है कि ये सब उन बाद के महान कुषाणों द्वारा निर्मित कराये गये हों जिन्होंने सिक्कों के अग्रभाग पर अपने पूर्वजों के नामों को यन्त्रवत् दुहराया है।

क. न्यूक्रा. १८९३, पृ० ११२, फलक ८–१०। तुकी. थॉ. इऐ. १८८३, पृ० ६; स्मिथ, जबंसो १८९७, पृ० ३ भी। एक ऐसे सिक्के के लिये जिसमें एक कुषाण अग्रभाग का ससेनियन पृष्ठभाग के साथ संयोग है, देखिए स्मिथ, उपु. पृ० ५।

§ ७५. *शक-ससेनियन* :—इस वर्ग के सिक्के सामान्य रूप से परोपनिसस के उत्तर में ओक्सस के तटवर्ती जिलों से प्राप्त हुए हैं; किन्तु यतः ये अवसर काबुल-घाटी में भी मिलते हैं और सम्भवतः इसका कारण इस क्षेत्र पर आक्रमण है, अतः यहाँ इनका

संक्षिप्त उल्लेख आवश्यक है (फलक २, १५)। इनकी तिथिगत सीमाओं का निम्न आँकड़ों द्वारा निर्धारण होता है :—(१) कुछ आरम्भिकतम नमूनों पर शिरस्त्राण का चित्र और उस ससेनियन राजा होरमज्द द्वितीय (ई० ३०१–ई० ३१०) का नाम अंकित है जिसने काबुल के कुषाण-राजा की पुत्री के साथ विवाह किया था; (२) बाद की सीमा (ई० ४५०) उस तिथि की द्योतक है जब ससेनियनों से ओक्सस के क्षेत्र को एफथेलाइटीज़ ने हस्तगत कर लिया (क न्यूका. १८९३, पृ० १६९)। अधिकांश दशाओं में विभिन्न सिक्कों की तिथियां निश्चित हैं क्योंकि उन पर समकालीन ससेनियन राजा के शिरस्त्राण के चित्र तथा अशुद्ध यूनानी अक्षरों में उसी राजा के नाम तथा उपाधियाँ अंकित हैं।

क. न्यूका. १८९३, पृ० १६६, फलक १३. १४।

इस दृष्टिकोण के अनुसार इस वर्ग के सिक्कों को परोपनिसस के उत्तर युह-ति (Yuch-ti) के ससेनियन विजेताओं ने चलाया था।

एक अन्य विद्वान्, ड्रूइन, इन सिक्कों को स्वयं युह-ति (Yuch-ti) (कुषाणों) का मानते हुए इन पर अंकित ससेनियन नामों तथा शिरस्त्राण की यह व्याख्या करते हैं कि इन दोनों को ससेनियन राजाओं के साथ अपनी दीर्घकालीन मित्रता के कारण युह-ति (Yuch-ti) लोगों ने ग्रहण कर लिया था। अतः इस मत के अनुसार ये सिक्के बाद के महान कुषाणों के तथा उन सिक्कों से भिन्न हैं जिनको ऊपर § ७४ में परोप-निसस के दूसरी ओर बर्कोसिया और बैक्ट्रियाना तथा भारत के सुदूर उत्तरवर्ती क्षेत्र से निर्मित एक भिन्न जनपद का कहा गया है।

ड्रून्यू. १८९६, पृ० १५४, फलक ५।

§ ७६. *किदार अथवा छोटे कुषाण* :—चीनी स्रोतों (स्पेख्त, जए. १८८३ (२) पृ० ३२८) से हमें यह ज्ञात होता है कि महान युह-तियों का नेता कि-तो-लो ने, जिसे कनिङ्घम (न्यूका. १८९३, पृ० १८४) ने सिक्कों के 'किदार' के साथ समीकृत

किया है, एफ्थेलाइटीजों (Ephthalites) से अत्यन्त त्रस्त होकर परोपनिसस (Paropanisus) पारकर के गान्धार—काबुल घाटी और पंजाब—में छोटे युह-तियों के साम्राज्य की स्थापना की। इस आक्रमण के समय को ४२५ ई० के लगभग निश्चित किया गया है क्योंकि एफ्थेलाइटीज़ (Ephthalites) कुछ समय के पश्चात, ४२८ ई० में वरह्रान् ५ के द्वारा पराजित हुये। दूसरी सीमा, ४७५ ई०, एफ्थेलाइटीजों द्वारा गान्धार विजय की द्योतक है। ऐसा प्रतीत होता है कि किदार कुषाण "सिन्धु के पश्चिम में चित्राल और गिलगिट जैसे उत्तर तथा इस नदी के पूर्व में पखली (Pakhali) और काश्मीर के क्षेत्रों में चले गये" (क. न्यूक्रा. १८९३, पृ० १८७)। इनकी शक्ति का काश्मीर के सिक्कों में सूत्र मिलता है (§ ११२), और इनका साम्राज्य हूण मिहरकुल (देखिये आगे § १०७) की पराजय के पश्चात् ऊपरी सिन्धु घाटी में पुनः स्थापित होकर ईसा की नवीं शताब्दी तक चलता रहा जब एक विद्रोह के फलस्वरूप एक ब्राह्मणवंश ने सिंहासन प्राप्त कर लिया (देखिए आगे § ११५)। किदार कुषाणों के पृष्ठ भाग पर एक बैठी हुई देवी है जो बाद के महान कुषाणों के सिक्कों के वर्ग (२) की द्योतक है (§ ७४)। यह तथ्य इस बात को व्यक्त करता है कि ये गान्धार की अपेक्षा काश्मीर के ही हैं। इनके अग्रभाग पर वंश-स्थापक किदार का और पृष्ठभाग पर राजा का नाम अंकित है (**फलक** २, १६)

क. न्यूक्रा. १८९३, पृ० १८४, फलक १५; प्रो. बंससो. १८८८, पृ० २०५। कालक्रम और जातिविज्ञान के लिये देखिये : ड्रू. जए. १८९१, (XVII), पृ० १४६ = रिव्यू. १८९१, पृ० २१९; ड्रू. ए. पृ० १४, १८९५; गुई. पृ० १६८।

९. कुषाणों के समकालीन वंश

§ ७७. अब, जब कि हम कुषाणों के सिक्कों के उस समय तक के इतिहास का अध्ययन कर चुके हैं जब भारत के इतिहास में हूणों (एफ्थलाइट अथवा श्वेत हूण) का प्रवेश स्पष्टतः लक्षित होने लगता है, तब कुछ पीछे लौटाकर कुषाणों की समकालीन अन्य शक्तियों के सिक्कों का वर्णन सुविधाजनक होगा।

§ ७८. *क्षहरात* :—यह सम्भवतः किसी शक परिवार या कबीले का नाम है। इस संबन्ध में ये प्रमाण हैं :—(१) महान् राजा मोग (देखिये ऊपर § २९) के तक्षिला के ताम्र-पत्र पर पतिक (Patik) को छहरा [त] और चुक्ष (कबीलों) के क्षत्रप, लियक कुसुलुक (Liak Kusuluk) का पुत्र कहा गया है।

भ. जएसो. १८९४, पृ० ५५१, डाउसन के मूल पाठ (जएसो. १८६३, पृ० २२१) के अनुसार कबीलों के नाम संशोधित हैं, जिन्हें बूहलर ने भी ठीक माना हैं। इन दो शब्दों की कनिङ्घम की व्याख्या के लिये देखिये ऊपर § ५६।

(२) सिंह शीर्ष को, जिसमें महान् क्षत्रप कुसुल का उल्लेख है, 'सम्पूर्ण शकस्थान की उपासना के लिये' समर्पित किया गया है (भ. सम्पादक बूहलर, जएसो, १८९४, पृ० ५४०);

(३) नहपान का उसके सिक्कों पर क्षहरात (ब्राह्मी) = छहरत (खरोष्ठी) के रूप में वर्णन है (भ. जएसो. १८९०, पृ० ६४२, फलक १) और अपने जामाता, उषवदात, के लेख के अनुसार वह एक शक प्रतीत होता है (क. काऐइ. पृ० १०५; आवेइ. IV, पृ० १०२);

(४) नहपान का विजेता, अन्ध्र शतकर्णि, शकों को पराजित करने तथा 'खखरात' परिवार का सर्वथा उन्मूलन कर देने की गर्वोक्ति करता है (ऑ. त्सीन्यू. १८८१, पृ० ३२० = इऐ. १८८१, पृ० २२६; आवेइ. IV, पृ० १०८)।

§ ७९. *नहपान* :—लियक कुसुलुक का कुषाण कोजोल कदफिस के साथ (गा. पृ० XLIX), अथवा क्षहरात का सिक्कों के खरमोस्त (क. न्यूक्रा. १८९०, पृ० १७१) अथवा सिंह शीर्ष के खरओस्त के साथ (भ. जएसो. १८९०, पृ० ६४१; १८९४, पृ० ५४९) समीकरण करने के लिये पर्याप्त आधार उपलब्ध नहीं हैं। अतः शकों द्वारा दक्षिणतम विजित क्षेत्र और "दक्कन अथवा मराठा प्रदेश, उत्तर कोनकन, गुजराज के कुछ भागों, सौराष्ट्र अथवा काठियावाड तथा कच्छ" पर शासन करनेवाले क्षत्रप, नहपान; के सिक्कों (**फलक** ३, १) के अतिरिक्त आज अन्य कोई

भी ऐसा सिक्का ज्ञात नहीं है जिसे इस परिवार का माना जा सके (भ. जएसो. १८९०, पृ० ६४२)। इनमें से कुछ क्षेत्रों को अन्ध्रों से विजित किया गया था (देखिये आगे § ८६), और भ. ने अनुमान किया है कि शक-संवत का आरम्भिक वर्ष ही शकों की इस विजय का समय है।

देखिये उ. स्था। इस संवत के प्रारम्भ से सम्बद्ध अन्य दृष्टिकोणों के लिये देखिए §§ ७२. ८०; क. कामेई. पृ. ३, ने, नहपान के लेखों की तिथियों से मालवों, अथवा विक्रमादित्य की संवत , ई. पू० ५७, का सन्दर्भ माना है।

फिर भी, यह निश्चित है कि नहपान अन्ध्रों द्वारा पराजित हुआ था, और क्षत्रपों के एक अन्य परिवार ने, सम्भवत: आरम्भ में अन्ध्रों की प्रभुता को स्वीकार करके क्षहरातों का स्थान ले लिया।

ऑ. त्सीन्यू. १८८१, पृ० ३२२ = इऐ. १८८१, पृ० २२५; बूहलर, इऐ. १८८३, पृ० २७२; भ. अडे. पृ० २५।

§ ८०. *सुराष्ट्र के क्षत्रप* :—इस परिवार का प्रथम सदस्य, जिसे कनिङ्घम शक सम्वत् का संस्थापक मानते हैं (कामेइ. पृ० ३), चष्टन (**फलक** ३, २) था जो सम्भवत: कुछ समय तक नहपान का समसामयिक और कदाचित उसी के समान एक शक था।

भ. जएसो. १८९०, पृ० ६४४, तक्षिला ताम्र-पत्र (देखिये ऊपर § ३३) पर गलती से 'चुक्ष' के स्थान पर 'चुत्स' पढ़ते हुये इस कबायली नाम में 'चष्टन' के नाम की उत्पत्ति देखते हैं।

इसका क्षेत्र मूलत: पश्चिमी राजपूताना रहा प्रतीत होता है और बाद में मालव (उज्जैन की राजधानी) भी इसके अन्तर्गत आ गया।

भ. जएसो. १८९०, पृ० ६४४; भ. अडे. पृ० २८।

नहपान के बाद इन क्षत्रपों के क्षेत्र के अन्तर्गत वे जनपद भी आ गये जिन पर मूलतः नहपान और चष्टन के पृथक्-पृथक् शासन थे। प्रथम दो क्षत्रपों, चष्टन और जयदामन्, के शासनकाल में, ऐसा प्रतीत होता है कि अन्ध्रों के प्रभुत्व का कभी तो सफलतापूर्वक प्रतिकार कर दिया गया और कभी उसकी दृढ़तापूर्वक स्थापना हो गई। इन आरम्भिक सिक्कों पर मिलनेवाली 'महाक्षत्रप' और 'क्षत्रप' की उपाधियों के विभेद की इस प्रकार व्याख्या की जा सकती है :—मूलतः एक साधारण क्षत्रप, चष्टन, एक महाक्षत्रप बन जाता है, जबकि उसका उत्तराधिकारी केवल हीन उपाधि ही धारण करता है (भ. जएसो. १८९०, पृ० ६४५)। इस वंश की स्वतन्त्रता तृतीय क्षत्रप, रुद्रदामन, के समय तक स्थापित हो गई प्रतीत होती है। यह रुद्रदामन अपने जूनागढ़ के लेख में दक्कन के राजा सातकर्णि को दो बार पराजित करने तथा अपने लिए महाक्षत्रप (स्वयमभिगतमहाक्षत्रपनाम्नः) की उपाधि अर्जित कर लेने की गर्वोक्ति करता है। जैसा कि सिक्कों की तिथियों से सिद्ध होता है, रुद्रदामन के बाद शासनारूढ़ व्यक्ति को सदैव महाक्षत्रप ही कहा गया है, और राज्य का उत्तराधिकारी, जो राज्य के कुछ भागों पर एक वाइसराय की भाँति शासन करता था, क्षत्रप कहलाता था।

§ ८१. पश्चिमी क्षत्रपों के सिक्के :—नहपान, और चष्टन तथा उसके उत्तराधिकारियों के सिक्के पंजाब के यूनानी राजाओं—विशेष रूप से सम्भवतः अपलदतस फिलोपेटर (क. कामेइ. पृ० ३)—के अनुकरण हैं और उसी तौल-मानक (पर्शियन, देखिये ऊपर § ८ : हेमी-ड्रेक्म = ४३.२ ग्रेन अथवा २.८ ग्राम) का अनुसरण करते प्रतीत होते हैं। इस उत्पत्ति के चिह्न उन रूपरेखात्मक यूनानी लेखों में देखे जा सकते हैं जो उस समय भी क्षत्रपों के सिक्कों के अग्रभाग पर एक अलंकरण के रूप में दुहराये जाते थे, यद्यपि इनका महत्त्व लुप्त हो चुका था।

इन यूनानी अक्षरों को महत्त्वपूर्ण सिद्ध करने के प्रयासों के लिये देखिये थॉ. जएसो. १८५०, पृ० ५२; भ. वही, १८९०, पृ० ६४३. ६४८; प्रिए. II. पृ० ८८।

नहपान की भाँति ही चष्टन के सिक्कों पर भी नागरी और खरोष्ठी में, लेख मिलते हैं : बाद के समस्त सिक्कों पर केवल नागरी लेख ही हैं। इस सम्पूर्ण अवधि में मुख्यतः

चाँदी के सिक्के ही चलते थे, किन्तु ताँबे के भी कुछ उदाहरण उपलब्ध हैं (जैसे, क. कामेइ. फलक १, ७–१२)।

§ ८२. *क्षत्रपों के सिक्कों पर लेख* :—पृष्ठभाग के लम्बे लेखों में नियमित रूप से शासनारूढ़ क्षत्रप तथा उसके पिता, दोनोंके नाम तथा उपाधियाँ मिलती हैं। इस प्रकार उपलब्ध आँकड़ों का अग्रभाग की तिथियों के साथ (देखिये नीचे § ८३) अध्ययन करने पर इस वंश की रूपरेखा का आश्चर्यजनक शुद्धता के साथ निर्माण करने में सहायता मिलती है (देखिये क. कामेइ. पृ० ५, में वंश-तालिका)। ईश्वरदत्त नामक एक बीच में आनेवाले शासक को, जिसने महाक्षत्रप की उपाधि धारण की और अपने शासनकाल के प्रथम और द्वितीय वर्ष की तिथियों से युक्त सिक्के भी आहत कराये, सम्भवतः इस वंश के चोदहवें और पन्द्रहवें सदस्य, विजयसेन और दामजडश्री तृतीय के बीच रक्खा जा सकता है (देखिये आगे § ८४)।

कर्नल जे. बिडुल्फ के संग्रह में दामजडश्री १ के पुत्र सत्यदामन् नामक एक अन्यथा अज्ञात क्षत्रप का सिक्का है। सिक्के का लेख विशुद्ध संस्कृत में होने के कारण उल्लेखनीय है। अर्जुन, जो सम्भवतः इसी वंश का एक सदस्य है, के एक सिक्के के लिये देखिये स्मिथ, जर्बंसो, १८९७, पृ० ९, फलक १, १५।

§ ८३. *क्षत्रपों के सिक्कों की तिथियाँ* :—लेखों की तिथियाँ रुद्रदामन् के जूनागढ़ के लेख के वर्ष ७२ से आरम्भ होती हैं (देखिये ऊपर § ८०)। सिक्कों की तिथियाँ (फलक ३, ३; दामसेन, तिथि १५३) पाँचवें क्षत्रप, जीवदामन के शासन काल में वर्ष १०० से आरम्भ होती हैं और तब से वंश के अन्त तक नियमित रूप से चलती हैं। अन्तिम ज्ञात तिथियाँ रुद्रसिंह, ३१०, और उसकी बहन के पुत्र, सिंहसेन, ३०४, हैं (भ. जएसो. १८९०, पृ० ६६२; क. कामेइ. पृ० ४)। उस संवत् का निर्धारण करने में, जिनसे इन तिथियों को सम्बद्ध किया जाय, यह ध्यान रखना चाहिये कि ये सम्भवतः इस वंश की आद्यन्त सीमाओं की द्योतक नहीं हैं। अस्तव्यस्तता की अवधि में, जब गुप्तों के आक्रमण के सम्मुख क्षत्रपों का साम्राज्य विच्छिन्न होने लगा, कमसे कम इतना तो सम्भव है कि कोई भी सिक्के निर्मित

नहीं हुये होंगे। भारत के इस भाग में आहत गुप्तों के आरम्भिकतम सिक्कों पर, दुर्भाग्यवश, कोई भी ऐसी तिथि नहीं है जिसे निश्चितता के साथ पढ़ा गया हो (स्मिथ, जएसो. १८८९, पृ० १२३); किन्तु इतना निश्चित है कि गुप्तों की विजय चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य (३८० ई०—४१४ ई०, स्मिथ, जएसो १८९३, पृ० ८२) के शासन के द्वितीयांश में हुई थी। अतः इन क्षत्रपों के सिक्कों की तिथियों को यदि शक संवत्, ई० ७८ के, साथ सम्बद्ध किया जाय तो सबसे बाद की तिथि ३१० = ई० ३८८, पूरी तरह चन्द्रगुप्त के शासनकाल के भीतर पड़ेगी; और इसके अतिरिक्त किसी विकल्प की, जैसा कि ऑल्डेनबर्ग (त्सीन्यू. १८८१, पृ० ३१८ = इऐ. १८८१, पृ० २२४) ने कहा है कि इन तिथियों को ई० १०० से आरम्भ होनेवाली एक स्वतंत्र क्षत्रपीय संवत् से सम्बद्ध करना चाहिये, कोई आवश्यकता नहीं।

देखिये एऐ. पृ० ४०५; स्टीवेन्सन, जबाएसो. २, पृ० ३७७; न्यूटन, वही, १८६१, पृ० १५; ७, पृ० १; ९, पृ० १; थॉ. जएसो. १८५०, पृ० १; फ्लीट, इऐ. १८८१, पृ० ३२५; प्रिए. १, पृ० ३३४, ४२५; २, पृ० ६९. ८४। संख्याओं के लिये, देखिये, प्रिए. २, पृ० ८०; भाऊदाजी, जबाएसो. ८, पृ० २२५।

§ ८४. *आभीर* :—इन आभीर राजाओं का हमें नासिक के अभिलेखों तथा पुराणों की तालिकाओं से पता लगता है (भअडे. पृ० ४५; ट्राका १८७४, पृ० ३४१; बूहलर, आवेइ. iv, १०३ और बाद)। ये सुराष्ट्र और मालव के क्षत्रपों के साथ सम्बद्ध और कभी-कभी उनके सेनानायकों के रूप में ज्ञात होते हैं (भ. जएसो. १८९०, पृ० ६५७); और यह भी कहा गया है कि इसी समय ये सह्याद्रि और कोनकन के राज्यपाल थे (भ. बाग. xvi, पृ० ६२४)। यह भी अनुमान किया गया है कि विजयसेन, वर्ष १७१, और दामजडश्री, वर्ष १७६ (देखिये ऊपर § ८२), के बीच महाक्षत्रपों की पीढ़ी के व्यवधान का कारण आभीर-राजा द्वारा अपने अधिपति की सत्ता का आहरण है। समकालीन क्षत्रप, वीरदामन् इस अवधि में भी निर्बाध शासन करता है, किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि महाक्षत्रप के पद को उस ईश्वरदत्त ने हस्तगत कर लिया था जिसने अपने शासनकाल के प्रथम और द्वितीय वर्ष की तिथियों

से युक्त ऐसे सिक्के आहत कराये जो विजयसेन और वीरदामन् दोनों के अनुकरण हैं। यह अनुमान (१) नाम के स्वरूप, और (२) तिथ्यांकन पद्धति, से निकृष्ट तर्कों द्वारा पुष्ट होता है।

भ. जएसो. १८९०; पृ० ६५६। भ. यह संकेत करते हैं कि यदि विजयसेन का अन्तिम वर्ष, १७१, ईश्वरदत्त का प्रथम वर्ष हो तो यह = २४८ ई०, सम्भवतः त्रिकूटक (अथवा चेदि) संवत के आरम्भ का द्योतक होगा; देखिये क. कामेइ. पृ० ४ भी। इनका यह भी कथन है कि माढरीपुत, जिसे सामान्यतः एक अन्ध्र माना जाता है, एक आभीर हो सकता है। मातृनाम का प्रयोग अन्ध्रों और आभीरों दोनों में प्रचलित है (बाग. xiv, पृ० ६२३, नोट २)।

§ ८५. *अन्ध्र*.—अन्ध्रों (अन्ध्रभृत्यों अथवा सातवाहनों) को यद्यपि पुराणों में मगध शासकों के रूप में वर्गीकृत किया गया है, तथापि ऐतिहासिक समय में ये एक दक्षिण भारतीय शक्ति हैं जिनकी राजधानी धान्यकटक = धरनिकोट अथवा अमरावती है, जो मद्रास के गुन्टूर जनपद में कृष्णा के तट पर स्थित है (क. ऐज्या. पृ० ५४०)। किन्तु जिस अवधि के लिये सिक्कों का प्रमाण उपलब्ध है उसमें यतः इनका इतिहास क्षहरातों तथा सुराष्ट्र और मालव के क्षत्रपों के साथ घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध है, और यतः स्वयं कुछ सिक्कों की शैली भी इस तथ्य की पुष्टि करती है, अतः इनका यहाँ विवेचन करना अत्यन्त सुविधाजनक होगा।

§ ८६. *पूर्वी और पश्चिमी अन्ध्र*:—इसी काल के पूर्व किसी समय अन्ध्रसाम्राज्य सम्पूर्ण प्रायद्वीप में पश्चिम की ओर अग्रसर होकर सागर से सागर तक और उत्तर में नर्बदा के उस पार तक फैल गया। इसी नदी के उत्तर के प्रान्त नहपान द्वारा विजित किये गये प्रतीत होते हैं (भ. जएसो. १८९०, पृ० ६४२), परन्तु गोतमीपुत्र सातकर्णि १ ने इन्हें पुनर्विजित (सम्भवतः ईसा की द्वितीय शताब्दी के आरम्भ में) और चष्टन के क्षत्रपत्व के अधीन सम्मिलित कर लिया। अन्ध्रों के उत्तरी और पश्चिमी भागों की राजधानी, पैथन, अर्थात् प्राचीन प्रतिष्ठान थी जो निजाम के क्षेत्र में गोदावरी नदी के तट पर औरङ्गाबाद जिले में स्थित थी। यह माना गया है (भअडे. पृ० ३३) कि

इस द्वितीय राजधानी में एक वाइसराय की भाँति युवराज ही शासन करता था, और धान्यकटक स्थित अन्ध्र सम्राट के साथ उसका वैसा ही सम्बन्ध था जैसा रुद्रदामन् के बाद सुराष्ट्र और मालव राज्य में क्षत्रप और महाक्षत्रप के बीच होता था। इस तथ्य का मुद्रा-लेखों से निर्धारण नहीं होता; किन्तु यह उल्लेखनीय है कि अन्ध्र-सिक्कों के दो प्रमुख वर्गों की राज्य के इन दो विभाजनों के साथ अनुरूपता है। दोनों वर्ग के सिक्कों पर एक ही नाम मिलते हैं; किन्तु पश्चिमी सिक्कों, जो प्रमुखतः कोल्हापुर राज्य में मिलते हैं, तथा पूर्व के सिक्कों में जो प्रमुखतः गोदावरी तथा कृष्णा के डेल्टा प्रदेश में मिलते हैं, न केवल प्रकार-भेद है (क. काऐइ. पृ० १०७) वरन् इस तथ्य का भी अन्तर है कि इनके लेखों पर ऐसे नाम अथवा उपाधियाँ हैं जो दूसरे पर नहीं मिलतीं।

गोतमीपुत (फलक ३, ४) और वासिठीपुत के सिक्कों के 'विळिवायकुरस', तथा माढरीपुत के सिक्कों के 'सेवलकुरस' (भअडे., पृ० २०) अथवा सिवाल°। भण्डारकर (उस्था.) ने इन नामों की कोल्हापुर जिले के वाइसरायों के नामों के रूप में व्याख्या की है। वह यह मानतें हैं कि प्रथम नाम का टॉलमी, ७. १, ८३ ने उल्लेख किया है : *ιππoΧoυρα* (=? कर्हाड अथवा कोल्हापुर, पृ० ४४) *βασιλειον βαλεoΧoυρoυ*।

§ ८७. *पूर्वी और पश्चिमी अन्ध्र सिक्कों के ठप्पे :*—इन दो वर्ग के सिक्कों के ठप्पों का विवेचन करने पर निम्न बातें व्यक्त की जा सकती हैं :—(१) 'चैत्य' का चिह्न, जो चष्टन तथा उसके समस्त उत्तराधिकारियों के सिक्कों की विशिष्टता है, निःसन्देह अन्ध्रों से गृहीत है; (२) उज्जैन के अधिकांश सिक्कों पर इस चिह्न का प्रयोग इस तथ्य का एक और प्रमाण प्रस्तुत करता है कि नहपान के नेतृत्व में शक-विजय के पूर्व मल्व भी अन्ध्र-साम्राज्य में सम्मिलित था; (३) अन्य सिक्कों की शैली या उनके ठप्पे उन्हें पल्लवों के सिक्कों के साथ सम्बद्ध करते हैं (देखिये आगे § १२८)।

अब तक उल्लिखित सभी अन्ध्र सिक्के या तो सीसे अथवा ताँबे से मिश्रित एक विचित्र धातु के बने हैं। बनावट की दृष्टि से इनकी उत्तर की सिक्का-शैली से पर्याप्त

भिन्नता है; और इनके तौल-मानक के सम्बन्ध में निश्चित कुछ भी नहीं कहा जा सकता। किन्तु तुलना कीजिये इकासइ. पृ० २३, नोट २।

फिर भी, सिक्कों का एक तृतीय वर्ग भी है, जिसका उदाहरण सुपार के स्तूप में मिला था। यह चाँदी का बना, बनावट और शैली में सुराष्ट्र और मल्व क्षत्रपों के प्राचीनतम सिक्कों के समान, और सम्भवतः उसी तौल-मानक के अनुसार बना है (फलक ३, ५)। अभी तक इस प्रकार के सिक्कों के केवल दो ही उदाहरण उपलब्ध हैं, और दोनों पर 'सिरियण गोतमीपुत सातकर्णि २', का नाम अङ्कित है जो सम्भवतः जयदामन अथवा रुद्रदामन का समकालीन रहा हो सकता है।

भ. जबाएसो. १५, पृ० ३०५, फलक २, ७. ७ ए.; बूहलर, इऐ. १८८३, पृ० २७३।

§ ८८. *अन्ध्र राजाओं का उत्तराधिकार-क्रम* :—इस वंश के विभिन्न सदस्यों के उत्तराधिकार के क्रम तथा कालक्रम-गत व्यवस्था के सम्बन्ध में अभी अत्यधिक अनिश्चितता है, और सिक्कों के स्रोत-निर्धारण के सम्बन्ध में भी ऐसी ही अनिश्चतता की स्थिति है। ऐसे सिक्कों को, जिन पर 'रणो गोतमीपुतस विळिवायकुरस' लिखा है (क. काऐइ. फलक १२, ६. ७; इकासइ. फलक २, ३९. ४०) कुछ विद्वान (भण्डारकर, ट्राका. १८७४, पृ० ३५१; ऑ. इऐ. १८८१, पृ० २२६) नहपान के विजेता, गोतमीपुत्र सातकर्णि १ का मानते हैं, और कुछ अन्य (भ. जबाएसो. १३, पृ०३०८; क. काऐइ. पृ० १०५) उस 'सिरियण गोतमीपुत सातकर्णि २ का जिसका नाम अन्य सिक्कों पर पूरा-पूरा लिखा मिलता है (§ ८७; क. काऐइ. फलक १२, ८–१२; इकासइ. पृ० २५)। दूसरी ओर गोतमीपुत सातकर्णि १, के उत्तराधिकारी, वासिठीपुत पुळुमायि, जो सम्भवतः चष्टन का समकालीन था, के सिक्कों का स्रोत सर्वथा निश्चित है।[1]

माढरीपुत (क. काऐइ. फलक १२, ४) और वासिठीपुत श्री वदसत (वही १३. १४) के नामों से युक्त सिक्कों की अन्ध्र-क्रम के अन्तर्गत स्थिति अपेक्षाकृत कम निश्चित है।[2]

ASHOKNAGAR MANGALORE-8.

[१]बूहलर, इऐ. १८८३, पृ० २७२। पुळुमायि और चष्टन की समकालिकता हर दृष्टि से सम्भव है, और टॉलमी के उद्धरण तो इसे निश्चित बना देते हैं: ७, १, ८२ *Βαιθανα* (पैथन) *βασιλειον* [*Σιρο*]*πτολεμαιον* तथा ७, १, ६३ *Ὀζηνή* (उज्जैन) *βασιλειον Τιαστανοῦ*: भाऊदाजी, जब्राएसो. ८, पृ० ११७।

[२]भ. का विचार है कि 'माढरीपुत' सम्भवतः एक आभीर (देखिये ऊपर § ८४) हो सकता है, और भअडे. पृ० ३५ का मत है कि यह अन्ध्र वंश की एक शाखा से सम्बद्ध है; किन्तु देखिये बूहलर, इऐ. १८८३, पृ० २७३; क. काऐइ. पृ० १०७। अन्ध्रों के सिक्कों के लिये: काऐइ. पृ० १०२ फलक १२; भ. जब्राएसो. १३, पृ० ३०३, फलक ३. ४; वहीं १५, पृ० २७३, फलक २; इकासइ. पृ० २८, फलक २, ३९–४८; थॉ. इऐ. १८७७, पृ० २७४; १८८०, पृ० ६१। तुर्की. प्रो. बंएसो. १८८२, ५९; १८९३, पृ० ११७; जबाएसो. १२, पृ० ४०७; १४, पृ० १५३; प्रिए. २, पृ० ६६। कालक्रम के लिये: बूहलर, इऐ. १८८३, पृ० २७२, भण्डारकर, ट्राका. १८७४; पृ० ३४७; और भअडे. पृ० २५ (आलोचना मिस डफ, जएसो. १८९५, पृ० ६९३); ऑ. त्सीन्यू. १८८१, पृ० ३२३ = इऐ. १८८१, पृ० २२७।

§ ८९. *कार्वार के नन्द राजा*:—प्रकार तथा बनावट में अन्ध्रों के बड़े सिक्कों के समान, और, इसी कारण सम्भवतः उनके ही समकालीन वे सिक्के भी हैं जिन पर कार्वार के दो नन्द राजाओं का नाम अङ्कित है।

क. काऐइ. पृ० 111; इकासइ. पृ० ३१, फलक २, ४१. ४२।

१०. गुप्तवंश तथा उनके समकालीन

§ ९०. *गुप्त राजवंश*:—इस वंश के संस्थापक श्रीगुप्त, २९० ई०, और उनके पुत्र घटोत्कच, का हमें केवल अभिलेखों में दी हुई वंश-तालिका से ही पता लगता है। सिक्कों का इस वंश के तृतीय सदस्य, उस चन्द्रगुप्त १ (फलक ४, ९) के शासनकाल में आरम्भ होता है, जिसने सर्वप्रथम 'महाराजाधिराज' की उपाधि धारण की, और जिसे ही गुप्तकाल का, जिसका प्रथम वर्ष ३१९–२० ई० है, संस्थापक मानना चाहिये

(स्मिथ, जबंसो, १८९४, पृ० १६५)। उत्तर भारत में गुप्तों का प्रभुत्व इसी तिथि से आरम्भ होता है और ४८० ई० में स्कन्दगुप्त की मृत्यु के साथ उसकी समाप्ति होती है। इस अवधि में गुप्त-सम्राटों का उत्तराधिकार-क्रम निश्चित, उनके शासन-काल की सीमायें लगभग निर्धारित, और उनके सिक्कों का क्रम भी पूर्ण है। स्कन्दगुप्त की मृत्यु के पश्चात्, हूणों के आक्रमण में, जो उसके शासनकाल में ही आरम्भ हो गये थे (देखिये आगे § १०३), और सम्भवतः आन्तरिक मतभेदों के कारण साम्राज्य कई भागों में बँट गया। इन भागों के सम्बन्ध में उत्तराधिकार-क्रम तथा विभिन्न शासनों की तिथियों के विषय में अभी पर्याप्त संदिग्धता है। यह बाद का गुप्तवंश भी ६०६ ई० में उस समय समाप्त हो गया जब कन्नोज के हर्षवर्धन ने सम्पूर्ण उत्तर भारत पर अपना प्रभुत्व स्थापित कर लिया (स्मिथ, जबंसो, १८९४, पृ० १७८)।

गुप्त साम्राज्य की मूल राजधानी पाटलिपुत्र (आधुनिक पटना) नहीं प्रतीत होती; और यह भी सम्भाव्य है कि चन्द्रगुप्त के सोने के सिक्कों के पृष्ठभाग पर उनकी महारानी कुमारदेवी के नाम के साथ लिखा हुआ 'लिच्छवयः' इस बात का द्योतक है कि वह (महारानी) पूर्व समय में पाटलिपुत्र पर शासन करनेवाले लिच्छवियों के राजपरिवार की थीं (बूहलर, वीमा. पृ०, २२५ और बाद; स्मिथ, जएसो १८९३, पृ० ८१)। चन्द्रगुप्त २ विक्रमादित्य के शासनकाल, ४१० ई० में, जब सुराष्ट्र और मालव के क्षत्रपों के राज्यों के विजय द्वारा साम्राज्य का व्यापक विस्तार हुआ, तो यह सम्भव है कि राजधानी को या तो स्थायी रूप से या कभी-कभी के लिये ही एक अधिक केन्द्रीय स्थान, अयोध्या, में स्थानान्तरित कर दिया गया (स्मिथ जएसो. १८९३, पृ० ८६)। अपने विस्तार के चरमोत्कर्ष के समय गुप्त-साम्राज्य के अन्तर्गत पंजाब को छोड़ कर, जहाँ अब भी कुषाणों का शासन था, सम्पूर्ण उत्तर भारत आ जाता है (स्मिथ, जबंसो. १८९४, पृ० १७८)।

§ ९१ *गुप्त राजवंश के सिक्के* :—साम्राज्य के प्रमुख भाग के सिक्के मूलतः सोने और ताँबे के होते थे। आरम्भ में तो सोने के सिक्कों के ठप्पे बाद के महान् कुषाणों की पूर्वी टकसालों से गृहीत थे, परन्तु बाद में इनमें अपना विकास लक्षित होता है; और इसमें सन्देह नहीं कि ये भारतीय कला के उत्कृष्टतम उदाहरण हैं। क्षत्रपों के

राज्य को भी सम्मिलित कर लेने के पश्चात् गुप्तों ने इस क्षेत्र में तिथियुक्त चाँदी के सिक्के भी चलाये जो यहाँ के पूर्वगामियों के सिक्कों के सर्वथा अनुकरण थे—अन्तर केवल इतना था कि इन पर चैत्य के स्थान पर पृष्ठभाग पर गुप्तों का सुपरिचित चिह्न, मयूर, अंकित था। इसी ठप्पे से युक्त परन्तु बनावट में कुछ भिन्न चाँदी के सिक्के बाद में, सम्भवतः, साम्राज्य के अन्य भागों में भी बनवाये गये प्रतीत होते हैं (देखिये आगे)। चन्द्रगुप्त द्वितीय विक्रमादित्य के चाँदी के सिक्कों की तिथियाँ निर्विवाद नहीं हैं (फ्लीट, इऐ. १८८५, पृ० ६६), किन्तु उनके उत्तराधिकारी, कुमारगुप्त प्रथम (१२१–१३६ : स्मिथ, जएसो. १८८९, पृ० १२८, और जबंसो, १८९४, पृ० १७५) तथा स्कन्दगुप्त (१४४–? १६x; फलक ४, १० : तिथि १४५) की तिथि अपेक्षाकृत अधिक निश्चित है।

सोने के सिक्के आरम्भ में तो उसी तौल-मानक का अनुसरण करते प्रतीत होते हैं जिन्हें कुषाणों ने रोमन ऑरेइ (aurei) (देखिये ऊपर § ७०) से ग्रहण किया था; परन्तु बाद में सोने के सिक्कों का एक अन्य वर्ग आता है जो भारतीय सुवर्ण (=१४६.४ ग्रेन अथवा ९.४८ ग्राम) को व्यक्त करता प्रतीत होता है, और इसका कारण प्राचीन देशीय तौल-मानक का पुनर्प्रचलन ही हो सकता है (देखिये ऊपर § ४)। ऐसा भी हो सकता है कि इन दोनों मानकों के सिक्के एक साथ ही चलते रहे हों, और इनका अभिलेखों में क्रमशः 'दीनारों' और 'सुवर्णों' के रूप में विभेद किया गया है (फ्लीट, CII. III, पृ० २६५; स्मिथ, जएसो. १८८९, पृ० ४३)। स्कन्दगुप्त के शासनकाल में रोमन मानक का परित्याग कर दिया गया; परन्तु यह निश्चित नहीं कि 'सुवर्ण' का पुनर्प्रचलन इसी समय आरम्भ हुआ या इसके पूर्व (रैपसन, न्यूक्रा. १८९१, पृ० ५७; स्मिथ, जएसो. १८९३, पृ० १०५)। गुप्तों के चाँदी के सिक्के भी क्षत्रपों के सिक्कों, जिनकी वे अनुकृति हैं, के समान ही पर्शियन मानक के 'हेमी-ड्रैक्म्स' के बराबर प्रतीत होते हैं (देखिये ऊपर § ८)। ऐसा सम्भव प्रतीत होता है कि गुप्तों की इस चाँदी के सिक्कों की प्रणाली ने, जो चन्द्रगुप्त द्वितीय विक्रमादित्य के शासन-काल में मूलतः सुराष्ट्र और मालव में आरम्भ हुई, बाद के दो शासनकालों में सम्राज्य के उत्तरी और केन्द्रीय प्रान्तों के सिक्कों के लिये भी उदाहरण बन गई। ये चाँदी के सिक्के, —जिन्हें सुविधापूर्वक पश्चिमी और केन्द्रीय कहा जा सकता है—बनावट, निर्माण-कौशल

और आकार-प्रकार की दृष्टि से भेद रखते हैं : ये बाद के सिक्के अपेक्षाकृत पतले और चिपटे, तथा अधिक सतर्कतापूर्वक निर्मित हैं, और इनके पृष्ठभाग पर बने मयूर की पूंछ अधिक विस्तृत है (स्मिथ, जएसो. १८८९, पृ० १२१.११७; क. कामेइ. पृ० १७)। चाँदी के पानी चढ़े हुए भ्रष्ट ताँबे के सिक्के, जिन पर कुमारगुप्त और स्कन्दगुप्त के नाम हैं परन्तु जिनके पृष्ठभाग पर मयूर के स्थान पर त्रिशूल है, सम्भवतः उस समय के वलभी (देखिये आगे § ९८) के हैं जब यह अभी गुप्त-साम्राज्य का ही एक प्रान्त था (स्मिथ, जएसो. १८९३. पृ० १३७; तुकी. बूहलर, वीमा. V, पृ० २१६)। साम्राज्य के प्रमुख भाग के ताँबे के सिक्के, ठप्पे की दृष्टि से, अधिक मौलिक तथा किसी भी पिछले ताँबे के सिक्कों के अत्यन्त कम अनुगृहीत प्रतीत होते हैं (**फलक** ४, ११ : चन्द्रगुप्त द्वितीय विक्रमादित्य; स्मिथ, जएसो. १८८९, पृ० १३८, फलक ४, ८–१६; वही १८९३, पृ० १३३; जबंसो. १८९४, पृ० १७३; न्यूक्रा. १८९५, पृ० १६७)।

वी. ए. स्मिथ के तीन लेख, जएसो. १८८९, पृ० १; वही १८९३, पृ० ७७; और जबंसो, १८९४, पृ० १६४, अपने प्रकाशन तिथि के समय तक गुप्तकालीन मुद्राशास्त्र सम्बन्धी समस्त कार्यों का सारांश प्रस्तुत करते हैं। विद्वानों की पूर्णतालिका के लिये देखिये जएसो. १८८९, पृ० ५८–५९; वही १८९३, पृ० ७९, टिप्पणियाँ; जबंसो, १८९४, पृ० १६४ और बाद।

§ ९२. *गुप्त-साम्राज्य का विभाजनः*—ईसा की पाँचवीं शताब्दी के अन्तिम चतुर्थांश में वलभी के सेनापति, भटार्क, के नेतृत्व में पश्चिमी प्रान्त स्वतन्त्र हो गये (बर्जेस, आवेइ. १८७४–७५, "काठियावाड़ और कच्छ", पृ० ८०; देखिये आगे § ९८) जब कि उत्तरी और केन्द्रीय प्रान्तों (पूर्वी मल्व) का शासन राजवंश की ही विभिन्न शाखाओं के हाथ में रहा। साम्राज्य के अन्य भागों की वह शक्तियाँ, जो पहले प्रजाएं अथवा सामन्तों आदि के रूप में थीं, स्वतन्त्र हो गईं। यहाँ केवल उन्हीं का उल्लेख करना आवश्यक होगा जिनके सिक्के उपलब्ध हैं।

इस काल के इतिहास की रूपरेखा के लिये : फ्लीट, CII, III की भूमिका; स्मिथ और हॉर्नले, 'कुमारगुप्त द्वितीय की 'भितरी' मुद्रा', जिसमें गुप्तों तथा अन्य समकालीन वंशों की समसामयिक तालिका भी है, जबंसो, १८८९, पृ० ८४।

§ ९३ *उत्तरी गुप्त* :—कुमारगुप्त प्रथम महेन्द्र के सीधे वंशजों के रूप में इस शाखा में 'भितरी मुद्रा' के द्वारा तीन व्यक्तियों का पता लगता है। प्रथम का नाम अभी निश्चित नहीं है। यदि 'स्थिर°' (बूहलर) पढ़ा जाय तो यह स्कन्दगुप्त का ही एक दूसरा नाम होगा क्योंकि 'स्थिर' शब्द 'स्कन्द' का ही एक पर्याय है। यदि 'पुर°' (हॉर्नले) अथवा 'पुरु°' (कनिङ्घम) पढ़ा जाय तो इससे निश्चित रूप से स्कन्द° के एक भ्राता के नाम का तात्पर्य होना चाहिये। 'प्रकाशादित्य' उपाधि से युक्त सिक्कों को अनुमानतः इसी राजा का माना गया है (हॉर्नले, जबंसो. १८८९, पृ० ९४; स्मिथ, जएसो. १८८९, फलक ३, ९. १०; वही १८९३, पृ० १२५)। इसके पुत्र, मुहरों के नृसिंहगुप्त को सिक्कों के नर(गुप्त) बालादित्य के साथ समीकृत किया गया है (हॉर्नले, जबंसो. १८८९, पृ० ९३; स्मिथ, जएसो. फलक ३, ११; वही, १८९३, पृ० १२८)। इसके अतिरिक्त इसे हूण मिहिरकुल के विजेता, बालादित्य के साथ भी समीकृत किया गया है (देखिये आगे § १०७; हॉर्नले, जबंसो, १८८९, पृ० ९३; क. कामेइ. पृ० ११। इस समीकरण पर शंका प्रकट की गई है : स्मिथ, जएसो. १८८९, पृ० ११५)। मुहरों के कुमारगुप्त द्वितीय का सिक्कों के कुमारगुप्त विक्रमादित्य के साथ समीकरण किसी भी प्रकार संदिग्ध नहीं प्रतीत होता (हॉर्नले, जबंसो. १८८९, पृ० ९४; रैपसन, न्यूक्रा. १८९१, पृ० ५०; स्मिथ, जएसो. १८८९, फलक २, १२; वही १८९३, पृ० १२९)। गुप्तवंश की इस शाखा में उत्तराधिकार-क्रम सम्बन्धी समस्त निश्चित ज्ञान यहीं समाप्त हो जाता है; किन्तु यह सम्भव है कि एक विष्णुगुप्त चन्द्रादित्य, जिसके सिक्कों की नर(गुप्त) बालादित्य और कुमारगुप्त द्वितीय क्रमादित्य के सिक्कों में अत्यधिक समानता है, इस अन्तिम राजा का उत्तराधिकारी रहा हो (क. कामेइ. पृ० १२. १९, फलक २, ४)। इस शाखा का अन्तिम व्यक्ति सम्भवतः किर्ण सुवर्ण का राजा शशांक (**फलक** ४,१५), ६०० ई०, था जिसने, ऐसा प्रतीत होता है कि, नरेन्द्रगुप्त नाम भी धारण किया था (क. कामेइ. पृ० १२; स्मिथ, जबंसो, १८९४, पृ० १७२)।

'शशाङ्क' नाम से युक्त सिक्के, क. कामेइ. पृ० १२, फलक २, ५; स्मिथ, जएसो. १८९३, पृ० १४७। 'नरेन्द्र' नामवाले सिक्के, जबंसो. १८५२, पृ० ४०२, फलक १२,

११; स्मिथ, जएसो. १८९३, पृ० १४६; और जबंसो. १८९४, पृ० १८९। किर्ण सुवर्ण = मुर्शीदाबाद जिले में रङ्गमट्टी : लेयर्ड, जबंसो. १८५३, पृ० २८१; बीवरिज, जबंसो. १८९३, पृ० ३१५; स्मिथ, जबंसो. १८९४; पृ० १७२।

§ ९४. *पूर्वी माल्व के गुप्त* :—यह शाखा, जो सम्भवतः स्वयं स्कन्दगुप्त की सीधी वंशज रही हो सकती है (क. कामेइ पृ० १०), ५१० ई० अथवा उसके थोड़े ही बाद उस समय समाप्त हो जाती है जब हूण तोरमाण ने माल्व को विजित कर लिया। इसके अन्तिम राजाओं के नाम 'बुद्धगुप्त' (अभिलेख पर तिथि १६५ = ४८४ ई०, और चाँदी के सिक्कों पर तिथि १७४ = ४९३ ई०), और 'भानुगुप्त' (अभिलेख पर १९१ = ५१० ई०) हैं। बुद्धगुप्त के चाँदी के हेमीड्रेक्म ही एकमात्र ज्ञात सिक्के हैं, और इनकी, जैसी कि स्वभावतः आशा की जा सकती है, बनावट केन्द्रीय गुप्त सिक्कों के समान है (§ ९१)।

स्मिथ. जएसो. १८८९, पृ० ८. ५३. १३५; क. आसरि. IX, पृ० २५, फलक ५, १३; क. न्यूक्रा. १८९४, पृ० २५२।

§ ९५. *पूर्वी मगध का बाद का गुप्तवंश* :—किसी भी ज्ञात सिक्के को इस वंश का भी माना जा सकना सन्दिग्ध है। अत्यन्त भ्रष्ट सोने के सिक्के, जिन्हें पहले इसी वंश का माना जाता था (स्मिथ, जएसो. १८८९, पृ० ११), सम्भवतः उत्तरी शाखा के हैं (देखिये ऊपर § ९३)।

वंशतालिकाओं के लिये, क. कामेइ. पृ० १४; CI. III, पृ० २००; क. आसरि. III. पृ० १३७; वही XV, पृ० १६६।

§ ९६. *अनिश्चित गुप्त-सिक्के* :—निम्न सिक्कों का अभी तक कोई संतोषजनक स्रोत निश्चित नहीं किया जा सका है :—(१) 'वीर' (? सेन अथवा सिंह) क्रमादित्य के नाम से युक्त सोने के सिक्के; इनका समय सम्भवतः ईसा की छठवीं शताब्दी है; इनका वज़न १६० और १७० ग्रेन, अथवा १०. ३६ और ११. ०१ ग्राम

के बीच है, और यह निश्चित नहीं कि इन्हें पर्शियन मानक—डिड्रेक्म = १७२. ९ ग्रेन अथवा ११.२ ग्राम से सम्बद्ध किया जाय, अथवा भारतीय मानक—१०० रत्ती = १८२.५ ग्रेन अथवा ११.८२ ग्राम—से (स्मिथ, जएसो १८८९, पृ० ११८, फलक ३, १२; वही १८९३, पृ० १३०)। (२) जय(गुप्त) (क. कामेइ. पृ० १९, फलक २, ३) के सोने के सिक्के। (३) चाँदी के सिक्के जिन पर प्रत्यक्षतः तिथि १६६ = ४८५ ई०, और 'श्री हरिकान्त' लेख से युक्त है (स्मिथ, जबंसो. १८९४, पृ० १९५, फलक ६, १५)। (४) ताँबे के सिक्के जिन पर '(श्री) महाराज्ञो (ह)रिगुप्तस्य' लिखा है (क. कामेइ. पृ० १९, फलक २; ६)।

§ ९७. *पश्चिमी मगध के मौखरी* :—अभिलेखों से ये पूर्वी मगध के बाद के गुप्तवंश के समकालीन और प्रतिद्वन्द्वी प्रतीत होते हैं। केन्द्रीय गुप्तों की सिक्का-शैली से अनुकृत तथा इस वंश के दो सदस्यों के नामों से युक्त चाँदी के सिक्के ज्ञात हैं—ईशानवर्मन् के (**फलक** ४, १३; मगध के कुमारगुप्त तृतीय का समकालीन) जिस पर तिथि ५४, और ५५ है (स्मिथ. जबंसो. १८९४, पृ० १९३; क. कामेइ. फलक २, १२; स्मिथ, जएसो. १८८९, पृ० १३६); और इसके पुत्र, सर्ववर्मन्, के जिन पर तिथि ५८ है (स्मिथ, जबंसो. १८९४, पृ० १९३)।

इन तिथियों के पाठ पर कुछ संदेह है : फ्लीट, इऐ. १८८५, पृ० ६८; और इनका काल तो सर्वथा सन्दिग्ध है, देखिये आगे § १०५। तुकी. क. आसरि. IX, पृ० २७, फलक ५, २०–२२; और VXI, पृ० ७९; CII. IIII, पृ० २००, भी।

§ ९८. *वलभी* :—वलभी के राजाओं (**फलक** ४,१२) को कुछ ऐसे सिक्कों का स्रोत बताया गया है जिनके पृष्ठभाग पर एक त्रिशूल और भ्रष्ट अक्षरों में ऐसी लिखावट है जिसे अभी पूरी तरह पढ़ा नहीं जा सका है, परन्तु जिसमें 'भट्टारकस' उपाधि सम्मिलित प्रतीत होती है। इनका पश्चिमी गुप्तशैली के चाँदी के सिक्कों से अनुकरण किया गया प्रतीत होता है (§ ९१)। स्वतन्त्र होने के पूर्व सम्भवतः वलभी के, जब यह अभी भी गुप्तों के शासन के अन्तर्गत था, आरम्भिक सिक्कों के लिए देखिये ऊपर § ९१।

क. आसरि. IX, पृ० २८, फलक ५, १२. २४, इस लेख को इस वंश के प्रवर्तक, सेनापति भट्टारक ('भटार्क' भी) तथा उसके ज्येष्ठ पुत्र धरसेन के नामों और उपाधियों से युक्त पढ़ते हैं, किन्तु ये पाठ अत्यन्त सन्दिग्ध हैं। तुकी. क. कामेइ. पृ० ८, फलक १, १६; हॉर्नले, प्रो. बंएसो. १८९०, पृ० १७१, फलक ७, ४a और b; थॉ. जबंसो. १८५५, पृ० ५०९; वही, जएसो. १८५०, पृ० ६३, फलक २, ३५-३८; वही. प्रिए. II. पृ० १००; प्रिन्सेप, जबंसो. IV पृ० ६८७; न्यूटन, जबाएसो. VII, पृ० १४; जबाएसो, पृ० XXXIX.

§ ९९. *भीमसेन* (**फलक** ४, १४) :—बनावट और लेख की प्रकृति की दृष्टि से ये सिक्के भी, बुद्धगुप्त के सिक्कों की ही भाँति, केन्द्रीय गुप्त-शैली के समान हैं (देखिये ऊपर § ९४)। इन पर ऐसी तिथियाँ अंकित हैं जिन्हें अभी निश्चत रूप से पढ़ा नहीं जा सका है, परन्तु ये सम्भवतः उसी युग के हैं जिसके तोरमाण (§ १०५) के इसी समान सिक्के।

क. आसरि, IX. २६, फलक ५, १६; स्मिथ, जएसो. १८८९, पृ० १३५। भीमसेन के एक अभिलेख के लिये : क. आसरि. IX, पृ० ११९, फलक ३०।

§ १००. *कृष्णराज* (**फलक** ४, १७) :—पश्चिमी गुप्त बनावट के ये सिक्के जिला नासिक में मिलते हैं और इन्हें इस नाम के एक राष्ट्रकूट राजा, ३७५-४०० ई०, का बताया गया है। फिर भी यह स्रोत-निर्धारण निःसन्देह त्रुटिपूर्ण है क्योंकि यह तिथि इन सिक्कों की शैली के लिये, जो इस स्थान में प्रचलित सबसे बाद के गुप्त सिक्कों के अनुकरण हैं, बहुत पहले है। इसी कारण इन्हें इतना बाद का भी नहीं कहा जा सकता जितना अपेक्षाकृत अधिक परिचित कृष्णराज राष्ट्रकूट का समय, ७५६ ई०, है। अतः इसका स्रोत अभी भी अनिश्चित ही छोड़ देना चाहिये।

क. कामेइ. पृ० ८, फलक, १, १८. १९; क. आसरि. IX, पृ० ३०, फलक ५, २६; फ्लीट, इऐ. १८८५, पृ० ६८; भाऊदाजी, जबाएसो. XII, २१४; स्मिथ, जएसो. १८८९, पृ० १३८; इकासइ. पृ० १४९।

§ १०१. *नर्वर के नौ नाग* :—पुराणों में पद्मवती (=नर्वर, क. जबंसो १८६५, पृ० ११५; क. कामेइ. पृ० २१) के नागों और मगध के गुप्तों को एक साथ वर्गीकृत किया गया है, और इन दोनों के समकालीन होने के तथ्य की समुद्रगुप्त के इलाहाबाद के स्तम्भ-अभिलेख में सहायक राजाओं के अन्तर्गत गणपति नाग (फलक ५, २) के उल्लेख से भी पुष्टि होती है (C. II. III, पृ० १ और बाद)। सिक्कों पर इस वंश के छः सदस्यों के नाम तो पूर्णरूप में मिलते हैं, जब कि दो अन्य नागों के भी कुछ अंश पढ़े जा सकते हैं।

क. कामेइ. पृ० २०, फलक २, १३–२५; क. आसरि. II, ३०७; VI १७८।

इन्हीं से घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध कुछ ऐसे सिक्के भी हैं जिनपर 'अच्यु' लिखा है, जिससे निश्चित रूप से इलाहाबाद के अभिलेख के 'अच्युत' का ही तात्पर्य है। यह सम्भव है कि यह अच्युत एक नाग-वंशी राजा रहा हो।

रैपसन, जएसो. १८९७, पृ० ४२०; स्मिथ, वही, पृ० ६४३।

§ १०२. *? पारिव्राजक महाराजा* :—गुप्तों के इन सहायकों को "डभाल, सम्भवतः = डहाल, तथा अट्ठारह अरण्य राज्यों का शासक कहा गया है" (CII. III, पृ० ९३ और बाद)। यह सम्भव है कि 'राण हस्ति' नाम से युक्त सिक्कों को उस महाराज हस्तिन् ने बनवाया हो जिसके अभिलेखों पर १५६ से १९१ = ४७५ से ५१० ई०, की तिथियाँ पड़ी हैं। फिर भी, यह कथन अत्यन्त सन्दिग्ध है।

CII. III, भूमिका, पृ० ८, और पृ० ९५। सिक्कों के लिये क. कामेइ. पृ० ८, फलक १, १७; प्रिए. १, पृ० ८७, फलक ४, २३ (कनौज में मिला सिक्का)।

बनावट और आकार में इनसे घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध कुछ ऐसे छोटे सिक्के भी मिले हैं जिन पर 'विग्रह' का नाम पढ़ा गया है (रैपसन)। वेन्टुर द्वारा मनिक्यल स्तूप में ७ वीं और ८ वीं शताब्दी के सिक्कों के साथ इनके भी उदाहरण मिले हैं।

प्रिए. I, पृ० ९४, फलक ५, ५–७।

§ १०३. *हूण* :—भारत के हूण आक्रामक (जिन्हें संस्कृत साहित्य और अभिलेखों में 'सित–', 'श्वेत–', अथवा 'हार-हूण' कहा गया है : देखिये स्मिथ, जबंसो. १८९४, पृ० १८६) जिनके आक्रमणों ने स्कन्दगुप्त, ४५२–४८० ई०, के शासनकाल में आरम्भ होकर गुप्त साम्राज्य को छिन्न-भिन्न कर दिया, उन एफथेलाइटीज (Ephthalites) अथवा श्वेत हुणों की एक शाखायें थे जो ओक्सस क्षेत्र में ४२० ई० में बस गये तार्तार जाति के लोग थे। इस समय से लेकर ५५६ ई० में तुर्कों द्वारा इनकी शक्ति नष्ट हो जाने तक के बीच की अवधि में ये लोग ससेनियन साम्राज्यवाद के साथ प्रायः निरन्तर युद्धरत[1] रहे।

यज़्दगर्द द्वितीय (Yezdegerd), ४३८-४५७ ई०, और फीरूज़, ४५७-४८४ ई०, के शासनकालों में ससेनियनों की पराजय के कारण इस शक्ति का भारत में भी प्रसार हो गया क्योंकि भारत के सीमावर्ती ससेनियन प्रदेश एफथेलाइटीज़ के अधीन हो गये (क. न्यूक्रा. १८९४, पृ० २४५)। इस आक्रमण के नायक का नाम, जिसने किदार कुषाणों (देखिये ऊपर § ७६) से गान्धार के राज्य को विजित करके शाकल में अपनी राजधानी स्थापित की, चीनी स्रोतों से 'लाये-लिः' ज्ञात होता है, जिसे अनुमानतः सिक्कों के 'राज लखन उदयादित्य' के साथ समीकृत किया गया है।[2]

१. ड्रूह. १८९५।

२. क. न्यूक्रा. १८९४, पृ० २४७. ५४१. २७९, फलक ९, १२। थॉ. प्रिए. १, पृ० ४११ (सं. ४) ने इस नाम को 'लमत', और ड्रूइन, जए. १८९३ (I) पृ० ५४८, ने 'लतोन' अथवा 'लनोन' पढ़ा है।

§ १०४. *हूण सिक्के* :—हूण-सिक्कों की सर्वाधिक विशिष्टता इनमें मौलिकता का अभाव है : ये प्रायः बिना किसी अपवाद के ही, ससेनियनों, कुषाणों, या गुप्तों के सिक्कों के अनुकरण या उनसे ही गृहीत हैं। अतः ये हूणों की विजय की सीमा तथा प्रगति का बहुमूल्य प्रमाण प्रस्तुत करते हैं। कालक्रम की दृष्टि से ससेनियन बनावटवाले सिक्के

स्वभावत: सबसे पुराने हैं; और इन्हीं में से वे सिक्के भी, जिन पर शक-ससेनियन सिक्कों के समान ही यूनानी अक्षरों के परिवर्तित रूप में लेख मिलते हैं (देखिये ऊपर § ७५), निःसन्देह उन सिक्कों की अपेक्षा अधिक प्राचीन हैं जिन पर नागरी में लेख हैं, और ये कम से कम अंशतः, भारत पर आक्रमण के पूर्व एफथेलाइटीज के समय के हो सकते हैं (क. न्यूक्रा. १८९४, पृ० २६२)। इन आरम्भिक हूण सिक्कों में से अनेक केवल ससेनियन टुकड़े मात्र प्रतीत होते हैं जिन पर हूण नायक के नाम का ठप्पा लगा दिया गया है (**फलक** ४, १८ : शाहि जवूव्लः) जिसके कारण पृष्ठभाग का ठप्पा—ससेनियन अग्निचैत्य—सर्वथा समाप्त हो गया है। इसमें सन्देह नहीं कि इस प्रकार निर्मित सिक्के ही बाद में साधारण रूप से बने सिक्कों की बनावट के आधार बने।

क. उपु. पृ० २६२; और तुकी. फलक ९, १०-१५, ११. १०, ३. ४ सहित। पतली चादर पर ठप्पा लगा कर बने इन सिक्कों को काश्मीर का बताया गया है, किन्तु यह निष्कर्ष 'षाहि खिङ्गिल' (वही फलक ९, ११) के उस 'खिङ्खिल नरेन्द्रादित्य' के साथ समीकरण पर आधारित है जिसका राजतरङ्गिणी में 'मिहिरकुल' (वही पृ० २६५) के उत्तराधिकारी के रूप में उल्लेख है। फिर भी, यह समीकरण निश्चित नहीं है, और 'खिङ्गिल' के सिक्के 'मिहिरकुल' के सिक्कों से पुराने प्रतीत होते हैं। इन सिक्कों के 'षाहि जवूव्लः' अथवा 'जबुल' को, कनिङ्घम ने 'महाराज तोरमाण षाह जऊव्ल' के कुर अभिलेख के प्रमाण के आधार पर तोरमाण के साथ समीकृत किया है (वही पृ० २५३); किन्तु यह उपाधि केवल एक कबायली नाम हो सकता है जो वंश के किसी भी सदस्य के लिये व्यवहृत होता था : देखिये बूह्लर, एइ. I, पृ० २३९; और स्मिथ, जबंसो, १८९४, पृ० १८९।

§ १०५. *हूण सिक्के* :—अन्य नमूने प्रचलित ससेनियन, और विशेष रूप से फीरूज़ (**फलक** ५, ३) के शासनकाल के उत्तरार्द्ध, अर्थात् ४७१-४८६ ई० में, चलाये गये सिक्कों के अनुकरण हैं। प्रथम अनुकरण, जो अपने मूलरूपों के सर्वाधिक समान हैं, मारवाड में प्रचुर मात्रा में मिले हैं, और इन्होंने पर्याप्त औचित्य के साथ महान् हूण विजेता, लाए-लिः के पुत्र, तोरमाण, ४९०-५१५ ई०, का माना गया है (हॉर्नले, प्रो. बंएसो. १८८९, पृ० २२८; जबंसो. १८९०, पृ० १६८, फलक ५)। स्थिति जो

2210

कुछ भी, ये प्रायः निश्चित रूप से निचली सिन्धु घाटी और पश्चिमी राजपूताना पर हूणों की विजय को प्रमाणित करते हैं। इस प्रकार भारत में प्रविष्ट ससेनियन प्रकार की, इस समय के लगभग तीन या चार सौ वर्षों तक गुजरात, राजपूताना, तथा गङ्गा के दोआबा क्षेत्र के सिक्कों पर प्रमुख रूप से छाप बनी रही (देखिये § १२२)। पूर्वी माल्व (देखिये ऊपर § ९४) के बाद के गुप्त साम्राज्य पर हूणों की विजय का तोरमाण के चाँदी के 'हेमिड्रेक्म्स' से प्रमाण मिलता है (**फलक** ४, १६) जो बुद्धगुप्त के सिक्कों के अत्यन्त सूक्ष्म अनुकरण हैं : अन्तर केवल इतना ही है कि अग्रभाग पर राजा का सर दूसरी दिशा में घुमा दिया गया है। इन सिक्कों पर तिथि ५२ है, किन्तु इस तिथि का किस संवत् से तात्पर्य है इसका सन्तोषजनक निर्धारण नहीं हो सका है (स्मिथ, जएसो. १८८९, पृ० १३६; क. आसरि. IX, फलक ५, १८. १९; क कामेइ. पृ० २०, फलक २, ११)।

तोरमाण के हेमिड्रेक्म्स की तिथि के संवत् के सम्बन्ध में निम्नलिखित परामर्श प्रस्तुत किये गये हैं : (१) फ्लीट, इऐ. १८८९, पृ० २२८, यह मानते हैं कि ५२ तिथि तोरमाण के शासन की वर्ष-संख्या की द्योतक है। यह व्याख्या इस तथ्य द्वारा असम्भव बन जाती है कि इशानवर्मन् और शर्ववर्मन् नामक मौखरी (देखिये ऊपर § ९७) तथा भीमसेन भी (देखिये ऊपर § ९९) इसी सम्वत् के अनुसार तिथि देते हैं (स्मिथ, जबंसो, १८९४, पृ० १९४)। (२) ड्रुइन, जए. १८९० (XVI) पृ० ३६८, यह व्यक्त करते हैं ४४८ ई० से एक हूण सम्वत् आरम्भ होता है, जो हूणों की भारत पर प्रथम विजय की तिथि को व्यक्त करता है। (३) क. न्यूक्रा. १८९४, पृ० २५२, यह मानते हैं कि या तो यह तिथि शक संवत् से सम्बद्ध है जिसमें सैकड़े की संख्या को छोड़ दिया गया है, अर्थात् ५२ = ४५२; अथवा (४) उ. स्था. यह हूण संवत् , ४५६ ई०, के आरम्भ की द्योतक है, जब इन लोगों ने ससेनियनों पर महान् विजय प्राप्त की थी। पूर्वी मल्व के बाद के ज्ञात गुप्तवंशी राजाओं की तिथियों के लिये, देखिये ऊपर § ९४।

§ १०६. हूण सिक्के :—तोरमाण के पुत्र और उत्तराधिकारी मिहिरकुल, ५१५-५४४ ई० के चाँदी के सिक्के (**फलक** ४, २०) केवल ससेनियन बनावट के ही हैं (क. न्यूक्रा. १८९४, पृ० २५६, २८०, फलक १०, ३. ४; प्रिए. I पृ० ४११)

तोरमाण (फलक ४, १९) और मिहिरकुल (फलक ४, २१) दोनों के ताँबे के सिक्के मिलते-जुलते हैं जो एक ही साथ ससेनियन और गुप्त दोनों ही मूलरूपों के प्रभाव को व्यक्त करते हैं (क. न्यूक्रा. १८९४, पृ० २६५. २८०, फलक ९, १६. १७, और १०, १. २; स्मिथ, जबंसो. १८९४, पृ० १९५. २०३)। ये प्रमुख रूप से पूर्वी पंजाब और राजपूताना में मिलते हैं और किसी किसी दशा में तोरमाण के लेखों के ऊपर ही मिहिरकुल के लेखों और चिह्नों का ठप्पा लगा दिया गया है (फ्लीट, इऐ १८८६, पृ० २४५)। ताँबे के सिक्कों का एकमात्र यही वर्ग ऐसा है जिसे हूण तोरमाण से सम्बद्ध किया जा सकता है, किन्तु मिहिरकुल के सिक्कों के अन्य वर्ग भी ज्ञात हैं। इनमें से एक पर सामान्य कुषण ठप्पा लगा है (देखिये ऊपर § ७४ (२); क न्यूक्रा. १८९४, पृ० २५६. २८१, फलक १०,५.६; स्मिथ, जबंसो, १८९४, पृ० २०३); जब कि अन्य वर्ग (उदाहरण के लिये क. उपु. फलक १०, ७) के ठप्पों का स्रोत अपेक्षाकृत कम निश्चित है।

कुषण ठप्पोंवाले मिहिरकुल के ताँबे के सिक्कों को काश्मीर प्रदेश का न मानना सन्दिग्ध है। गन्धार से बाहर कर दिये जाने पर किदार कुषाणों का सम्भवतः काश्मीर पर आधिपत्य बना रहा (देखिये ऊपर § ७६), और इसे हूणों ने सम्भवतः सर्वप्रथम मिहिरकुल के शासनकाल के समय विजित कर लिया। हूण तोरमाण के प्रस्तावित समीकरण के विरुद्ध मत के लिये : क. न्यूक्रा. १८९४, पृ० २५६। सन्दिग्ध रूप से काश्मीर के कहे जानेवाले अन्य हूण-सिक्कों के लिये देखिये ऊपर § १०४।

§ *१०७ हूण सिक्के* :—सभी प्रकार के हूण सिक्के ऐसे नामों अथवा नामांशों से युक्त मिलते हैं जो आज किसी भी अन्य स्रोत से अज्ञात हैं। यह सम्भव है कि एक ही समय में एकाधिक हूण वंश शासनारूढ़ रहे हों; अथवा साम्राज्य के विभिन्न प्रांतों पर शासन करनेवाले वाइसरायों ने इन सिक्कों को आहत कराया हो। हूण-सिक्कों की तिथि-सीमा सम्भवत: ५४४ ई० है जब मिहिरकुल के शासनकाल में, हिन्दू राजा यशोधर्मन्, मल्व के विष्णुवर्धन, और मगध के नरसिंहगुप्त बालादित्य के संघ द्वारा हूण शक्ति भङ्ग हो गई (क. न्यूक्रा. १८९४, पृ० २५८)। फिर भी इस शक्ति के कुछ टुकड़े कुछ बाद के समय तक बचे रह गये हो सकते हैं।

§ १०८. *अनिश्चित, हूण अथवा पर्शियन* :—सिक्कों के कुछ सुज्ञात वर्ग ऐसे भी जिनकी राष्ट्रीयता अभी ठीक-ठीक निर्धारित नहीं की जा सकती। अपनी पतली बनाव तथा पृष्ठभाग पर नित्य रूप से मिलनेवाली अग्नि-वेदिका के कारण इनकी ससेनिय उत्पत्ति के चिह्न मिलते हैं। अतः इनमें कुछ ऐसी विशिष्टतायें हैं जो हूण सिक्कों तथा पंजा और सिन्ध के पर्शियन राजाओं के सिक्कों में समान रूप से मिलती हैं। इन सन्दिग वर्गं के सिक्कों में से सर्वाधिक सुविदित वह सिक्का है जिस पर 'नप्कि मल्क' का ना अंकित है।

क. न्यूक्रा. १८९४, पृ० २६७, फलक १२, २; एऐ. फलक १७, ५. ७. १०. १७; इ्न्यू. १८९१, पृ० २२१।

११. उत्तरी, पूर्वी, मध्य, और पश्चिमी भारत के बाद के सिक्के

§ १०९. *पञ्जाब और सिन्ध के पर्शियन राजा* :—उत्तर-पश्चिमी भारत ससेनियन ठप्पों और बनावट के ऐसे सिक्के मिलते हैं जिन पर नागरी तथा ससेनियन-पह्लव में लेख हैं। साथ ही इन पर एक ऐसा अक्षर भी है जिसे अभी तक पढ़ा नहीं जा सव है और जो सम्भवतः शक-ससेनियनों द्वारा प्रयुक्त यूनानी अक्षरों के परिष्कृत स्वरूप विकसित हुआ प्रतीत होता है (देखिये ऊपर § ७५)। इन्हें कभी-कभी बाद के हूणों व माना गया है (क. न्यूक्रा. १८९४, पृ० २६७. २८९), किन्तु प्रत्यक्षः इसके लिए को आधार नहीं है। ये निश्चित रूप से किसी ऐसे ससेनियन वंश या वंशों द्वारा आह कराये गये होंगे—जैसा कि सिक्कों की शैली तथा ससेनियन-पह्लवी के प्रयोग से व्यत्त होता है—जो उस सिन्ध और मुल्तान के देशों पर शासन करते थे जिन्हें आरम्भिकत अरब भौगोलिकों ने सिन्ध के साम्राज्य के अन्तर्गत सम्मिलित किया है (एनसाइक्लो पीडिया ब्रिटानिका, नवां संस्करण, विषय 'मुल्तान')। यह देखा जा सकता है वि अन्य समयों में यह क्षेत्र पर्शियन विजेताओं के हाथ में रहा (देखिये § ६१, औ तुर्की. § ३०)। इनमें से एक की, जिस पर केवल 'श्री वासुदेव' का नाम तो केव नागरी अक्षरों में, किन्तु लेख का शेषांश ससेनियन-पह्लवी में हैं, तिथि इसकी खुस

द्वितीय पर्वीज़ द्वारा अपने शासनकाल के ३७ वें वर्ष = ६२७ ई०, में जारी किये गये सिक्कों के साथ समानता के आधार पर निश्चित की गई है (क. न्यूक्रा. १८९४, फलक १२, १० अथवा एऐ. फलक १७, ९, के साथ लॉमे. फलक, ११, ३)। इन सिक्कों के पह्लवी लेखों में वासुदेव को बह्मन् (= बह्मन्वसि, अथवा सिन्ध की राजधानी ब्रह्मनाबाद), मुल्तान, तुकान् (= पंजाब), ज़बुलिस्तान और सपर्दलक्षान् (सम्भवतः = राजपूताना; क. न्यूक्रा. १८९४, पृ० २९२) का राजा कहा गया है। 'शाहि तिगिन्' के सिक्कों को, जिनका एक ही प्रकार के पृष्ठ भाग के प्रयोग के कारण वासुदेव के तथा ऊपर उल्लिखित खुसरू द्वितीय के सिक्कों के साथ घनिष्ठ सन्बन्ध है, मुल्तान के सूर्य-देवता को व्यक्त करनेवाला माना गया है (क. आसारि V. पृ० १२३) और इन पर 'भारत और पर्शिया के राजा' (नागरी : हितिवि च ऐरान् च परमेश्वर) = 'पंजाब और खोरासान के राजा' उपाधि (ससेनियन पह्लवीः 'तकान् खोरसान मल्का'; क. न्यूक्रा. १८९४, पृ० २९१) भी अङ्कित है। इस भारतीय-पर्शियन वर्ग (जैसे क. उपु. फलक १२, ५–८) के अन्य सिक्कों का स्रोत-निर्धारण तथा उनकी व्याख्या कम निश्चित है; किन्तु यह सम्भव प्रतीत होता है कि ये भी उसी देश और काल के हों जिसके अन्य।

तुर्की. विलसन, एऐ. पृ० ४००. ४०२, फलक १७, ६. ८. ९, फलक २१, २२; थॉ' हिअप. पृ० ९०; प्रिए. I, फलक ५, १०. ११; पृ० १२२, फलक ७, ६; II, पृ० १०५।

§ ११०. *कन्नौज (कान्यकुब्ज)* :—कन्नौज के मध्यकालीन साम्राज्य के निम्नलिखित वंशों के सिक्के ज्ञात हैं :—

(१) रघुवंशि वंश :—अनुमानतः हर्षदेव (६०६–६५० ई०) के बताये गये सिक्कों के लिये देखिये आगे § १२२। 'श्रीमद् आदिवराह' लेख से युक्त चाँदी के सिक्कों को भोजदेव ने बनवाया था (**फलक** ५, ५; ८५०–९०० ई०)।

हुल्श, एइ. I, पृ० १५५; क. कामेइ. पृ० ४९; फलक ६. २०. २१। अन्य सिक्कों के लिये, जो इसी वंश के हो सकते हैं, वहीं सन्दर्भ देखिये। लेख में श्रीमद्-आदिवराह के उल्लेख तथा अन्य समकालीन सिक्कों के लिये देखिये कीलहॉर्न, एइ. I, पृ० १६९।

(२) तोमर वंश :—ऐसा प्रतीत होता है कि इस वंश के राजाओं का आरम्भ में तो कन्नौज और दिल्ली दोनों पर आधिपत्य था परन्तु राठौरों द्वारा कन्नौज विजय, १०५० ई०, के बाद ये दिल्ली में ही सीमित हो गये। सिक्के कन्नौज और दिल्ली दोनों के तीन क्रमबद्ध राजाओं, ९७८–१०४९ ई०, तथा केवल दिल्ली के दो अन्य, १०४९–११२८ ई०, को व्यक्त करते हैं। सोने के सिक्के डहाल के कलचूरियों के ठप्पों का (देखिये आगे § ११६), और मिश्रित धातु के सिक्के गन्धार के ब्राह्मन शाहियों के ठप्पों (बैल और अश्वारोही प्रकार; देखिये आगे ११५ (६)) का अनुसरण करते हैं।

क. कामेइ. पृ० ८०, फलक IX, १–८; थॉ. पठान्स, पृ० ५८।

(३) राठोर (गाडहवाल) वंश :—कन्नौज के राठोर विजेता, चन्द्रदेव, १०५० ई०, के सिक्के ज्ञात नहीं हैं। इस शृङ्खला का उसके पुत्र, मदनपाल देव, १०८० ई०, से आरम्भ होता है, और ११९३ ई० तक शासन करनेवाले दो अन्य शासकों के सिक्के भी इसके अन्तर्गत सम्मिलित हैं। इस वर्ग के सिक्कों के ठप्पे का प्रकार इत्यादि तोमरवंश के ही समान है।

क. कामेइ. पृ० ८२, फलक ९, १५–१७।

§ *१११. मगध का पाल वंश* :—इस वंश का कोई भी सिक्का निश्चित रूप से ज्ञात नहीं है, किन्तु 'श्री विग्रह' नाम से युक्त ससेनियन प्रकार के सिक्कों को मगध के विग्रहपाल प्रथम, ९१० ई०, का माना जाना असम्भाव्य नहीं है।

स्मिथ, जबंसो, १८९४, पृ० १९२; क. आसरि. ११, पृ० १७५. १८१, फलक ४३; क. कामेइ. पृ० ५२, फलक ६, १७। सियाडोनी अभिलेख में 'विग्रहपाल' के नाम के उल्लेख के लिये देखिये कीलहॉर्न, एइ. I, पृ० १६७. १६९।

§ *११२. कश्मीर* :—कश्मीरी सिक्का-शैली के आरम्भ को कुछ उन सिक्कों में देखना चाहिये जिन्हें सम्भवतः कनिष्क (देखिये ऊपर § ७४, वर्ग (२)),

ने आहत कराया था; और इस समय से लेकर १३ वीं शताब्दी में मुसलमानों द्वारा कश्मीर विजय तक यह सिक्का प्रणाली—अग्रभाग : खड़ा राजा; पृष्ठभाग: बैठी हुई देवी—अपरिवर्तित रही। इस अवधि के अधिकांश समय में इन सिक्कों का निर्माण इतना भद्दा रहा (उदाहरण के लिये, **फलक** ४, २४; जगदेव, ११९८ ई०) कि कुछ दशाओं में इनके आकार-प्रकार की आरम्भिक मुद्राशास्त्रियों ने गलत व्याख्या कर दी। इनके निर्माण का यह भद्दा स्तर इतने दिनों तक स्थायी रहा कि बनावट में क्रमिक सुधार या भ्रष्टता द्वारा प्रस्तुत तिथि सम्बन्धी प्रमाण का यहाँ बहुत सीमा तक अभाव सा रहा है। अवन्तिवर्मन (८५५ ई०) के शासनकाल से सिक्के पर्याप्त अंशों तक उन राजाओं को व्यक्त करते हैं जिनकी सूची राजतरंगिणी में दी हुई है। इसके पहले की समस्त अवधि से सम्बन्धित राजतरंगिणी में दी हुई तिथियाँ तथा उत्तराधिकार क्रम अविश्वसनीय है, यद्यपि इनमें से अनेक नाम सिक्कों पर मिलते हैं। कुछ समय तक किदार कुषाणों का कश्मीर पर आधिपत्य होना निश्चित है, किन्तु इस क्षेत्र में इनके बसने की तिथि सन्दिग्ध है (देखिये ऊपर § ७६)। क. न्यूक्रा, १८९४, फलक १०, ५–७ और ९–१३ (देखिये ऊपर § १०६) में दिये गये हूणों के कश्मीरी सिक्के किदार कुषाणों के अनुकरण प्रतीत होते हैं; और इनके बाद के नाग अथवा कर्कोटक वंश (६२५–७५७ ई०, देखिये क. कामेइ पृ० ३९, फलक ३, ७–१४) के सभी सिक्के किदार (**फलक** ४, २२ : यशोवर्मन्) के नाम से युक्त हैं। हूण मिहिरकुल (५१५ ई०) की तिथि तथा नागवंश के आरम्भ होने के बीच की अवधि के बीच में कनिङ्घम अनेक राजाओं को स्थित करते हैं जिनमें एक 'तोरमाण' भी आता है। सामान्यतया इस राजा को मिहिरकुल के पिता, हूण तोरमाण, के साथ समीकृत किया गया है (राजेन्द्रलाल मित्र, प्रो. बंससो. १८७८, पृ० १९१; फ्लीट-CII. III, भूमिका पृ० १० और बाद)। इस समीकरण के विरुद्ध, तथा कश्मीर के तोरमाण का समय कुछ बाद होने के पक्ष में तर्कों के लिये देखिये क. न्यूक्रा. १८९४, पृ० २५६। कश्मीर के 'हर्ष' के कुछ सोने के सिक्के (**फलक** ४, २३), १०९० ई०, उन दक्षिण भारतीय सिक्कों के सीधे अनुकरण हैं जिनके स्रोत के लिये देखिये आगे § १२५ (१)।

क. कामेइ. पृ० २५, फलक ३–५; रौजर्स, जबंसो. १८७९, पृ० २७७, फलक ११–१२। देखिये क. न्यूक्रा. १८४३ (६), १; प्रिए. I, ३८८, फलक ३१, १–१५। तुर्यमाण (= तोरमाण, क. कामेइ. पृ० ४२, फलक ३, १) के स्थान पर 'तुज्जिन' (स्टीन) पाठ के लिये देखिये स्मिथ, जबंसो; १८९७, पृ० ६, फलक १, ९।

§ *११३. नेपाल* :—नेपाल की अपनी विशेषतावाले आरम्भिकतम सिक्के ऐसे बड़े ताँबे के टुकड़े हैं जिनका यौधेय सिक्कों के द्वितीय वर्ग के साथ बहुत कुछ साम्य है—निःसन्देह दोनों की कुषाणों के सिक्कों से उत्पत्ति के कारण ही यह साम्य है (देखिए ऊपर, § ६०)। इनका अवधि-विस्तार ईसा की ५वीं शताब्दी के प्रथम चतुर्थांश से लेकर ७वीं शताब्दी के अन्तिम चतुर्थांश तक विस्तृत प्रतीत होता है। 'मानाङ्क' नाम से युक्त सिक्कों को मानदेववर्मन, ४२५ ई०, का तथा 'गुणाङ्क' नाम से युक्त सिक्कों का उसके उत्तराधिकारी गुणकामदेववर्मन् , ४५० ई०, का माना गया है। ये नाम केवल सिक्कों पर तथा देशीय वंशतालिकाओं में ही मिलते हैं। अभिलेखों अथवा अन्य तिथियुक्त स्रोतों में अभी तक इनका उल्लेख नहीं मिल सका है जिससे इनका उक्त समय केवल आनुमानिक ही है। 'अंशुवर्मन्' (**फलक** ५, १) और 'जिष्णुगुप्त' के सिक्कों का अधिक ठीक-ठीक तिथि-निर्धारण किया जा सकता है क्योंकि सातवीं शताब्दी के तिथियुक्त अभिलेखों से ये दोनों नाम ज्ञात होते हैं। 'पशुपति' और 'वैश्रवण' नामों से युक्त सिक्कों का ठीक-ठीक तिथि-निर्धारण नहीं किया जा सकता है। ये देवताओं के नाम हैं, और यह अनिश्चित है कि किसने इन सिक्कों को निर्मित कराया। किन्तु शैली और बनावट की दृष्टि से ये भी उसी समय के प्रतीत होते हैं जिसके अन्य।

क. काऐइ. पृ० ११२, फलक १३; प्रिए. I, पृ० ६२, फलक ३, १२; जबंसो. १८६५, पृ० १२४, फलक १५–१९; बेन्डल, त्सांगे. ३६, पृ० ६५१; स्मिथ, प्रो. बंएसो. १८७७ पृ० १४४, फलक २; हॉर्नले, वही, १८८८, पृ० ११४। कालक्रम के लिये : बूह्लर, इऐ. १८८४, पृ० ४११; एस. लेवी. जए. १८९४ (IV), पृ० ६४, अंशुवर्मन् को और पहले का मानते हैं।

११४. गन्धार के शाहि :—गन्धार—काबुल घाटी और ऊपरी सिन्धु के क्षेत्र—

में प्रथम कुषाण विजेता (देखिये ऊपर § ६५) द्वारा स्थापित साम्राज्य के चिह्न थोड़े-थोड़े समयान्तर से उसके आरम्भ से लेकर अन्त तक (ई० पू० २५–१०२६ ई०) मिलते हैं।

साहित्यिक स्रोतों, जैसे अलबेरूनी, ह्वेनसांग, और राजतरङ्गिणी से निष्कृष्ट सूचनाओं के सारांश के लिये देखिये स्टीका. १८९३।

§ ११५. *शाहियों के सिक्के* :—इनके सिक्कों को कदाचित निम्न अवधियों के अन्तर्गत व्यवस्थित किया जा सकता है :—(१) आरम्भिक कुषाणों, ई० पू० २५–१८० ई०, के सिक्के (देखिये ऊपर §§ ६५–७३)। (२) इनके बाद के अनुकरण (देखिये § ७४) जिनका बाद के ससेनियन आक्रामकों (३००–४५० ई०) के सिक्कों ने अनुकरण किया (देखिये § ७५)। (३) किदार कुषाणों के सिक्के, जिनका गन्धार पर ४२५–४७५ ई० तक आधिपत्य रहा (देखिये § ७६)। फिर भी, यह सन्दिग्ध है कि इन सिक्कों को किदार कुषाणों के गन्धार के साम्राज्य का मानना चाहिये या कश्मीर के। (४) गान्धार में, ४७५–५३० ई०, आहत हूणों के सिक्के (देखिये § १०४) : हूणों के सिक्कों पर शाहि उपाधि के प्रयोग का स्रोत कदाचित यही है। (५) हूण काल के बाद, ह्वेन-त्साङ्ग, ६३० ई०, के आगमन के समय गन्धार का राजा एक क्षत्रिय था। यह सम्भवतः यह व्यक्त करता है कि कुषाण वंश हिन्दू बन गया (देखिये स्टीन, उपु. पृ० ५)। यह सन्दिग्ध है कि किन सिक्कों को इस अवधि का माना जाय—बाद के संभवतः भ्रष्ट कुषाण ठप्पों के अनुकरण वाले ताँबे के सिक्के ऐसे हैं (क कामेइ. पृ० ४९, फलक ६, १–६)। (६) अलबेरूनी के अनुसार (सचाउ, II, पृ० १३) एक ब्राह्मण वजीर ने सिंहासन हस्तगत करके एक वंश की स्थापना की। सामान्यतया अपने ठप्पों के प्रमुख प्रकार, "वृषभ और अश्वारोही", के आधार पर ज्ञात सिक्कों की शृंखला (८६०–९५० ई०; क कामेइ. पृ० ६२; **फलक** ५, ६ : स्पलपति) इसी ब्राह्मण वंश के विभिन्न सदस्यों से सम्बद्ध है। (७) शेष अवधि के, जिसकी सीमा महमूद गज़नी द्वारा इस वंश पर आधिपत्य के समय (अर्थात्, ९५०–१०२६ ई०) तक आती है, विभिन्न राजाओं के नाम तो अभिलेखों से ज्ञात होते हैं, परन्तु अभी तक किसी सिक्के को इनसे सम्बद्ध नहीं किया जा सका है। इन्हें राजपूत कहा जाता है, और यह अनुमान किया

गया है (कनिङ्घम) कि प्रतिविद्रोह ने ब्राह्मणों से छीन कर साम्राज्य को पुनः उसके पुराने अधिपति, क्षत्रियों के हाथ में पहुँचा दिया होगा ।

क. कामेइ. पृ० ५५, फलक ७; एऐ. पृ० ४२८, फलक १९, १–२३ । ब्राह्मण शाहियों के सिक्कों पर मानी गई तिथियों के लिये देखिये बेले, न्यूक्रा. १८८२, पृ० १२८. २९१; थॉ. इऐ. १८८३, पृ० २६०; फ्लीट, वही १८८६, पृ० १८५ ।

§ *११६. डहाल के कलचुरी* :—क्षेत्र : ऊपरी नर्मदा तथा उसकी सहायक नदियों द्वारा सिंचित प्रदेश (क. कामेइ. पृ० ६७) । राजधानी : त्रिपुरी (=तेवर) जिसके प्राचीन सिक्कों के लिये देखिये ऊपर § ५७ । मध्यकालीन साम्रज्य के सम्बन्ध में, केवल एक राजा, गाङ्गेयदेव (**फलक** ५, ७), १००५–१०३५ ई०, के सिक्के ज्ञात हैं । इन सिक्कों के एक ओर तो बैठी हुई देवी का प्राचीन भारतीय अंकन-प्रकार मिलता है, जब कि दूसरी ओर का सम्पूर्ण क्षेत्र लेख से युक्त है । जेजाहुति के चन्देलों (§ ११८) दिल्ली के तोमरों, और कन्नौज के राठौरों (§ ११०) ने इनका अनुकरण किया ।

क. कामेइ. पृ० ६७, फलक ८, १–५; क. आसरि. १७, ७१; अलबेरूनी (अनुवाद, सचाउ) १, पृ० २०२ ।

§ *११७. महाकोशल के कलचुरी* :—क्षेत्र : मध्यप्रदेश के छत्तीसगढ़ और रायपुर के वर्तमान जिले (क. कामेइ. पृ० ६७) । १०६० से ११४० ई० तक के बीच के तीन राजाओं के सिक्के ज्ञात हैं (**फलक** ५, ८ : जाजल्लदेव) । यतः डहाल के कलचुरियों के ही समान (§ ११६) इन सिक्कों के भी एक ओर तो पूरे क्षेत्र में लेख है, किन्तु दूसरी ओर बैठी हुई देवी का चित्र नहीं है ।

क. कामेइ. पृ० ६७, फलक ८, ६–११; हार्नले, प्रो, बंएसो. १८९३, पृ० ९३ ।

§ *११८. जेजाहुति अथवा महोबा के चन्देल* :—क्षेत्र : उत्तर में यमुना, दक्षिण में कियान (अथवा केन) का उद्गम क्षेत्र, पश्चिम में दसान, तथा पूर्व में विन्ध्य

पर्वत माला के बीच का भूभाग (क. कामेइ. पृ० ७७)। १०६३ और १२८२ ई० के बीच के नौ ज्ञात शासकों में से सिक्के सब को व्यक्त करते हैं। ये सिक्के डहाल के उन कलचुरियों के सिक्कों के अनुकरण हैं जिनके १०६३ ई० के पूर्व चन्देले अधीन थे (**फलक** ५, ९ : हल्लक्षणवर्मा)।

क. कामेइ. पृ० ७६, फलक ८, १२–२१; क. आसरि. २१, पृ० ७७; हॉर्नले, जबंसो, १८८९, पृ० ३४, फलक ४, ११. १२।

§ *११९. दिल्ली और अजमेर के चौहान* :—ये तोमरों से दिल्ली के (देखिये ऊपर § ११०) ११२८ ? ई० में, तथा ११८२ ई० में जेजाहुति (§ ११८) के विजेता हुये। चौहान सिक्कों के वे नमूने जिन्हें निश्चितता के साथ पढ़ लिया गया है, ११६२ से ११९२ ई० के दो अन्तिम शासकों, सोमेश्वर और पृथ्वीराज, को व्यक्त करते हैं। उक्त अन्तिम तिथि उस समय की द्योतक है जब मुहम्मद-इब्न-सम के नेतृत्व में मुसलमानों ने दिल्ली विजित किया। चौहानों के सिक्कों पर भी वृषभ और अश्वारोही (§ ११५ (६)) है, जिसने कुछ और पीढ़ियों तक चलते हुये मुसलमान विजेताओं, दिल्ली के सुल्तानों, के सिक्कों पर भी स्थान प्राप्त कर लिया (तुकी. लेकैसु. फलक १–१११)।

क. कामेइ. पृ० ८३, फलक ९, ९–१४; बूह्लर, प्रो. बंएसो. १८९३, पृ० ९४; मॉरिसन, वीमा. VII; थॉ. पठान्स, पृ० ६३। ऐसे राजपूत सिक्कों के लिये जिन्हें निश्चित रूप से नहीं पढ़ा जा सका है, देखिये थॉ. पठान्स, पृ० ५९; क. कामेइ. पृ० ८८।

§ *१२० नर्वर* :—गुप्तों के समकालीन नाग वंश के सिक्कों के लिये देखिये ऊपर § १०१। बाद के राजपूत सिक्के १२३० और १२९० ई० के बीच के छः ज्ञात राजाओं में से चार को व्यक्त करते हैं। इनमें एक ऐसा राजा—मलयवर्मा देव—भी सम्मिलित है, जो किसी भी अन्य वर्तमान स्रोत से अज्ञात है। इन सिक्कों पर विक्रम संवत् (५९ ई० पू०) के अनुसार तिथियाँ अंकित हैं।

क. कामेइ. पृ० ८९, फलक १०, १–१०; जबंसो. १८६५, पृ० ११५; थॉ. पठान्स, पृ० ६७।

§ १२१. *काँगड़ा* :—कांगड़ा के राजाओं के सिक्के कदाचित् १३३० से १६१० ई० तक के समय को व्यक्त करते हैं। ये यहाँ केवल इसीलिये उल्लेखनीय हैं कि इन पर भी एक भारतीय ठप्पा—वृषभ और अश्वारोही—मुसलमानों की विजय के कई शताब्दियों बाद तक भी बना रहा।

क. कामेइ. पृ० ९९, फलक ११; रॉजर्स, जबंसो, १८८०, पृ० १०, फलक २; प्रिए. I, पृ० ३९२ में उद्धृत बेले।

§ १२२. *अनिश्चित सिक्के* :—"सतलज से पूर्व में बनारस तक, और हिमालय से दक्षिण में नर्मदा नदी तक" प्रचुर मात्रा में मिलनेवाले सिक्कों (क. कामेइ. पृ० ४७) के तीन ऐसे वर्ग हैं जिनका अभी निश्चित रूप से स्रोत-निर्धारण नहीं किया जा सका है :—

(१) ससेनियन टप्पों से निष्कृष्ट पतले चाँदी के टुकड़े। इनमें से जो वास्तविक ससेनिय सिक्कों के केवल एक भोंडे अनुकरण हैं, उन्हें पर्याप्त सम्भावना के साथ हूणों का बताया गया है (§ १०५)। बाद के अनुकरण, जो, ज्यों-ज्यों अपने मूल रूप से दूर हटते जाते हैं, बनावट में मोटे और अपने मूलरूपों के भ्रष्ट अनुकरण हैं, कदाचित भारतीय हैं; किन्तु अभी इन्हें किसी वंश-विशेष के साथ निश्चित रूप से सम्बद्ध नहीं किया जा सकता। ये "गङ्गा के दोआबा क्षेत्र में सामान्य रूपसे मिलते हैं, किन्तु मेवाड़ और मारवाड़ तथा राजपूताना में सर्वत्र प्रचुर मात्रा में मिलते हैं" (क. कामेइ. पृ० ४८)। ये वर्ग (२) के सिक्कों के पूर्वगामी, अथवा मूल रूप से निष्कृष्ट परन्तु सर्वथ स्वतन्त्र हो सकते हैं। वजन में दोनों ही वर्ग समान हैं; और यतः इनके नमूनों में ६० से ६५ ग्रेन अथवा ३.८ से ४.२ ग्राम तक का अन्तर है, अतः ये भी कदाचित् अपने ससेनियन मूल रूपों की ही भाँति, यूनानी ड्रेवम (देखिये ऊपर § २४) को व्यक्त करते हैं। कुछ नमूने 'ह' अथवा 'ज' अक्षरों से युक्त हैं, और कनिङ्घम (उस्था.) ने अत्यन्त

ौचित्य के साथ यह व्यक्त किया है कि इनमें से प्रथम अक्षर कन्नौज के हर्षवर्धन के ाम का प्रथमाक्षर हो सकता है। कन्नौज के भोजदेव (श्रीमद्-आदिवराह) के बाद ; सिक्के निश्चित रूप से बनावट में समान, और सम्भवतः एक ही स्रोत से गृहीत हैं देखिये ऊपर § ११०)। उनका यह भी कहना है कि 'श्री विग्रह' नाम से युक्त सेक्के सम्भवतः भोजदेव के किसी उत्तराधिकारी ने आहत कराये होंगे (कामेइ. पृ० ९१); किन्तु सम्भवतः इन्हें मगध के विग्रहपाल प्रथम (देखिये ऊपर § १११) का ानना अपेक्षाकृत अधिक उचित है।

क. कामेइ. पृ० ४८, फलक ६, १३-१९।

(२) ससेनियन ठप्पों से ही गृहीत मोटे चाँदी के टुकड़े, जिनका निर्माण इतना भ्रष्ट है कि अपने मूल के साथ इनका कदाचित् ही साम्य रह गया है। इन्हें सामान्यतया 'गधिया पैसा' (**फलक** ५, ४) कहते हैं और कनिङ्घम (कामेइ. पृ० ५०) इन्हें जौनपुर के अभिलेख के 'षड्बोद्धिक द्रम्मों' के साथ समीकृत करते हैं (क. आसरि. ११, पृ० १७६)। ये दक्षिण-पश्चिम राजपूताना, मेवाड़, मल्व, और गुजराज में मिलते हैं (क. कामेइ. पृ० ४७)। अग्रभाग के ठप्पों के आधार पर ये एक ऐसे वर्ग के सिक्कों से सम्बद्ध हैं जिनके पृष्ठ भाग की भ्रष्ट अग्नि-वेदिका के स्थान पर 'सोमलदेव' का नाम अंकित है। यही नाम उन सिक्कों पर भी आता है जिनका अग्रभाग 'अश्वारोही' प्रकार का, और कदाचित् गन्धार के ब्राह्मण शाहियों से गृहीत है (§ ११५ (६))।

क. कामेइ. पृ० ४९, फलक ६, १०-१२; भ. जबाएसो. १२, पृ० ३२५। तुक० वही ११, पृ० ३३४; प्रिए. I. पृ० ३४१, फलक २७, १३-१६।

(३) अत्यन्त भोंडी बनावट के ताँबे के सिक्के, जो सम्भवतः बाद के कुषाणों (वर्ग (१), देखिये ऊपर § ६४) के अनुकरण हैं—अग्रभाग : खड़ा राजा; पृष्ठभाग—शिव और वृषभ। फिर भी, इनका निर्माण इतना भ्रष्ट है कि इनके अग्रभाग को सामान्यतया

ससेनियन अग्नि-वेदिका का द्योतक मान लिया गया है। कनिङ्घम यह मानते हैं कि ये सिक्के ५०० और ८०० ई० के बीच के समय में पंजाब और राजपूताना की साधारण ताँबे की मुद्रायें थे (देखिये ऊपर § ११५ (५))।

क. कामेइ. पृ० ४८, फलक ६, १–६।

१२. दक्षिण भारत के सिक्के

१२३. सामान्य टिप्पणी :—उत्तर भारत के मुद्राशास्त्रीय इतिहास में एक के बाद दूसरे विदेशी आक्रमण महत्त्वपूर्ण घटनाक्रम की सीमायें प्रस्तुत करते हैं। परन्तु दक्षिण की सिक्का प्रणाली के इतिहास के विभिन्न कालों को व्यक्त करनेवाली कोई ऐसी प्रमुख घटना-सीमायें नहीं हैं। साथ ही साथ, लेखयुक्त सिक्कों का अनुपात कम, और उनका वर्गीकरण बहुत सीमा तक नमूनों के प्रामाण्य, बनावट की प्रकृति, तथा ठप्पों के प्रकार पर निर्भर करता है। इसके अतिरिक्त जैसा कि उत्तर के सिक्कों के विवेचन के फलस्वरूप मूल्यवान ऐतिहासिक परिणाम उपलब्ध हो चुका है, उसकी तुलना में दक्षिण के सिक्कों का अभी तक कोई वैज्ञानिक विवेचन नहीं किया गया है।

यह सम्भव है कि पञ्च-मार्क बनाने की पुरातन विधि (देखिये § ५) उत्तर की अपेक्षा दक्षिण में बहुत अधिक समय तक प्रचलित रही; और कुछ दशाओं में यह स्पष्ट है कि सिक्के बनाने की कला में बाद के सुधार इसी देशी विधि में सुधार पर निर्भर है न कि ठप्पों से सिक्का बनाने की किसी विदेशी विधि के प्रभाव पर (§ देखिये आगे § १२९ तुकी. इलियट, न्यूमिस्मेटिक ग्लीनिङ्ग, पृ० १२ = जमसो. XIX, पृ० २३१)।

रोमन सोने और चाँदी के सिक्के (देखिये ऊपर § १४) प्रचुर मात्रा में दक्षिण भारत तथा लङ्का में मिलते हैं, और सम्भव है ये वास्तव में इन देशों में मुद्रा रूप में भी प्रयुक्त होते रहे हों, जब कि उत्तर में रोमन सोने के सिक्कों ने कुषाणों के बाद सोने के सिक्कों के लिए धातु का कुछ अंश मात्र प्रस्तुत किया हो सकता है।

दक्षिण भारत के उन राज्यों की सूची में, जिनके सिक्कों का निर्धारण किया गया

है, अन्ध्र सम्मिलित नहीं है क्योंकि इसका पहले ही विवेचन किया जा चुका है (देखिये ऊपर § ८५)।

§ १२४. *पाण्ड्य* :—क्षेत्र : प्रायद्वीप का सुदूर दक्षिणी छोर। पञ्चमार्क सिक्कों के, जो जैसे कि अन्यत्र भी हैं, यहाँ भी अत्यन्त प्राचीन समय के हैं, (देखिये ऊपर § ४), बाद के सर्वाधिक प्राचीन पाण्ड्य सिक्के वह प्रतीत होते हैं जिनका मूल चौकोर स्वरूप तो सुरक्षित है, परन्तु जिन पर केवल एक ही ठप्पे से एक हाथी अंकित हैं। इनके कुछ बाद के सिक्के वह हैं जिनके दोनों ओर ठप्पे लगे हैं। यह प्रायः निश्चित है, कि दक्षिण भारत के प्रचलन के अनुसार, ऐतिहासिक तथ्यों को ऐसे राजवंशावलि-सूचक चिह्नों से व्यक्त किया गया है जो सिक्कोंपर प्रमुख ठप्पेके साथ ही मिलते हैं। अतः इन चिह्नों की संख्या के अन्तर द्वारा सिक्कों की कालक्रमिक व्यवस्था के लिए और अधिक आँकड़े उपलब्ध हो सकते हैं। इन सिक्कों को ३०० ई० के लगभग समाप्त होने वाले समय का बताय गया है; और शैली तथा निर्माण-कला की दृष्टि से इनकी अन्ध्रों (§ ८७) तथा पल्लवों (§ १२८) के साथ समानता इस अनुमानको और भी सम्भाव्य बना देती है।

लवेन्थल, कॉयन्स ऑफ टिन्नेवेली (मदरास १८८८) पृ० ५, फलक १, ७–१५; ड्रुफनेल, हिन्ट्स टु कॉयन-कलेक्टर्स इन साउथ इन्डिया (मदरास १८८९) पृ० ८, फलक १, २।

३००–६०० ई० के बीच के समय के किन सिक्कों को पाण्ड्यों का माना जाय यह विषय अभी नितान्त अनिश्चित है।

अनुमान के आधार पर निर्धारित इस काल के सिक्कों के लिये : लवेन्थल, उपु. पृ० ७, फलक १, १६–३३।

बाद के समय में सार्वभौमिक रूप से पाण्ड्यों द्वारा गृहीत चिह्नों, जैसे मछली, से युक्त सोने के सिक्कों को ईसा की ७ वीं से १० वीं शताब्दी के बीच का निश्चित किया गया है (इकासइ. १२०; **फलक** ५, १०)। बाद के ताँबे के सिक्के ११ वीं शताब्दी

के मध्य में चोलों की विजय के प्रभाव को व्यक्त करते हैं (देखिये आगे § १२६)।

इकासइ. पृ० ११९, फलक ३, १२९-१३८; ट्रेसी, जमसो. १८८७-८, पृ० १३८।

§ १२५. चेर :—क्षेत्र : मलाबार प्रान्त। ८७७ ई० में चोलों की विजय के पूर्व चेर वंश के चरमोतकर्ष काल के लिये किसी भी सिक्के को अभी तक निर्धारित नही किया जा सका है। इस तिथि के बाद कुछ ऐसे जिले, जो चेरों की शक्ति के अन्तर्गत और अब तक वाइसरायों द्वारा शासित थे, स्वतन्त्र हो गये। इस प्रकार के दो जिलो के आहत सिक्के ज्ञात हैं :—

(१) कोङ्गुदेश:—"नन्दिद्रुग तक मैसूर का पश्चिमी भाग तथा कोयम्बटूर और सलेम" (इकासइ. पृ० १११)। कुछ सोने तथा ताँबे के ऐसे सिक्कों को इस जिले क माना गया है जिन पर सामान्यतया अन्य चिह्नों के साथ-साथ चेर-चिह्न, एक धनुष मिलता है। इन सोने के सिक्कों, जिनका प्रमुख ठप्पा हाथी है (फलक ५, १२), क तिथि १०९० ई० के पूर्व किसी समय तक सीमित है, क्योंकि कश्मीर के हर्षदेव ने इनक अनुसरण किया है (देखिये § ११२)। इस सिक्का-शैली का प्रत्यक्षतः वास्तव में राज तरङ्गिणी में संकेत मिलता है—७, ९२६ : 'दाक्षिणात्याभवद् भङ्गिः प्रिया तस्य विला सिनः, कर्णाटनुगुणस् टङ्कस ततस् तेन प्रवर्त्तितः'। कनिङ्घम ने (कामेइ, पृ० ३५) कर्णा का 'कर्नाटिक' अनुवाद करते हुये इन सिक्कों के स्रोत को परिवर्तित कर दिया है; किन्त 'कर्णाट', प्रायद्वीप के मध्य भाग के एक ऐसे जिले का द्योतक प्रतीत होता है जिसके अन्तर्ग यदि पूरा नहीं तो कम से कम कोङ्गुदेश का कुछ भाग भी सम्मिलित था (लइ. I, पृ० १७०)

इकासइ. पृ० १११, फलक ३, ११८-१२८।

(२) केरल : यह शब्द, जिसे कभी-कभी चेर के पर्याय के रूप में प्रयुक्त किय जाता है, यहाँ अपने अधिक सीमित अर्थ में प्रयुक्त हुआ है और पश्चिमी तट के उस भाग का द्योतक है जो चन्द्रगिरि तथा कुमारी अन्तरीप के बीच स्थिति है (इकासइ. पृ ६१)। इस क्षेत्र पर शासन करनेवाले एक वंश का एक अद्वितीय सिक्का ब्रिटि

संग्रहालय में है और इस पर सम्भवतः ११ वीं या १२ वीं शताब्दी के नागरी अक्षरों में 'श्री वीरकेरलस्य' लिखा है (**फलक** ५, ११)।

ऐसे वंश के लिये जिसके सदस्य यही उपाधि धारण करते थे, देखिये सुन्दरम् पिलइः सम अर्ली सॉवेरन्स ऑफ ट्रावनकोर, इए. १८९५, पृ० २४९ और बाद।

§ १२६. चोल :—सभी सिक्के उस समय के ही हैं जब चोल लोग दक्षिण भारत की सर्वोच्च शक्ति बन रहे या बन चुके थे। इनके दो वर्ग हैं :—(१) १०२२ ई० के पूर्व राजराज चोल के शासन-काल के आरम्भ के सिक्के, जो यह दिखाते हैं कि चोल शक्ति सर्वप्रभुतासम्पन्न हो चली थी : इन पर मध्य में चोल चिह्न—एक सिंह—बना है और उसके दोनों ओर पाण्ड्य तथा चेर चिह्न (मत्स्य तथा धनुष) हैं। संस्कृत अक्षरों में सिक्कों के लेख में चोल राजाओं के नाम या उपाधियाँ अंकित है; किन्तु इनको वंश-तालिकाओं में मिलनेवाले नामों के साथ निर्विवाद रूप से समीकृत नहीं किया जा सका है (**फलक** ५, १३)। (२) १०२२ के बाद के सिक्के। राजराज के शासन के साथ एक सर्वथा नवीन ठप्पे का सिक्का आरम्भ हुआ—अग्रभागः खड़ा राजा; पृष्ठभाग बैठा हुआ राजा (**फलक** ५, १४)। चोल शक्ति के विस्तार के साथ यह प्रकार दक्षिण भारत के विस्तृत क्षेत्र में फैल गया। लङ्का द्वीप पर चोलों के आधिपत्य के परिणाम-स्वरूप इसका प्रयोग वहाँ भी प्रचलित हुआ, और कैण्डी के स्वतन्त्र राजा इसका व्यवहार करते रहे (देखिये आगे § १२७)।

इकासइ. पृ० १३५, फलक ४, १५१-१७४; हुल्श, इए. १८९२, पृ० ३२३, फलक १, ७; वहीं १८९६, पृ० ३१७, फलक १, १. २।

एक चोल राजा, सम्भवतः कुलोत्तुङ्ग चोल प्रथम, १०७० ई०, को कुछ ऐसे सिक्कों का स्रोत निश्चित किया गया है जो पूर्वी चालुक्यों, चालुक्यचन्द्र और राजराज द्वितीय के समान ही अत्यन्त पतली सोने की पत्तर पर ठप्पे से निर्मित हैं (देखिये आगे § १३०) जिससे ठप्पे का निशान पीछे की तरफ भी उभर आया है।

हुल्श, इए. १८९६, पृ० ३२१, फलक २, २६. २७।

§ १२७. *लङ्का* :—कैण्डी राजाओं के, जिन्होंने अपने चोल पूर्वगामियों के सिक्के को ही बिना किसी महत्त्वपूर्ण परिमार्जन के ग्रहण कर लिया, सिक्के ११५३ से १२९६ ई० के बीच के समय को व्यक्त करते हैं (**फलक** ५, १५ : 'पराक्रमबाहु')। इस समय के पूर्व लङ्का में प्रचलित सिक्कों की अपनी कोई विशिष्टता नहीं है :—वे या तो प्राचीन पञ्चमार्क प्रकार के हैं अथवा विदेशी वाणिज्य या आक्रमण के फलस्वरूप देश में आ गये हैं।

(रिडे. ऐकासी.; तुर्की. वॉक्स, न्यूक्रा. १८५४ (XVI), पृ० १२१; प्रिए. १, पृ० ४१९, फलक ३५; लाउस्ले, न्यूका. १८९५, पृ० २११, फलक ८; रङ्गाचारी और देशिकाचारी, इए. १८९५, पृ० ३३२)।

§ १२८. *पल्लव* :—क्षेत्र : कारोमण्डल तटवर्ती क्षेत्र। इसी क्षेत्र में वह कुरुम्बर भी रहते थे, जिनका ईसा की ७ वीं शताब्दी के पूर्व पर्याप्त महत्त्व था। इन दो जातियों के सिक्कों के बीच कोई ठीक-ठीक विभेद नहीं किया जा सका है। इस क्षेत्र के सिक्के दो वर्गों के अन्तर्गत आते हैं :—(१) जिनकी शैली की दृष्टि से अन्ध्रों के सिक्कों के साथ कुछ समानता है (उदाहरण के लिये, इकासइ. फलक २, ५५–५८, जिनको 'कुरुम्बर'; और सम्भवतः वही १, ३१–३८, जिनको पल्लव या कुरुम्बर कहते हैं), और इस कारण ये सम्भवतः उसी समय (ईसा. की द्वितीय या तृतीय शताब्दी) के ही हो सकते हैं। पृष्ठभाग पर नौका कदाचित विदेशों के साथ व्यापार को प्रमाणित करती है, जिसके लिये पल्लव गण विख्यात थे। (२) दूसरा वर्ग सोने और चाँदी के सिक्कों का और निश्चित रूप से बाद का है; किन्तु यहाँ भी ऐसा कोई प्रमाण प्रतीत नहीं होता जिससे इनकी ठीक-ठीक तिथि निर्धारित की जा सके। इस प्रकार के समस्त सिक्कों पर पल्लव चिह्न—शेर-बबर, तथा कन्नड़ और संस्कृत में लेख मिलते हैं (**फलक** ५, १६)।

इकासइ. पृ० ३५ और बाद, फलक १, ३१–३८; २, ४९–५८; वही जमसो. XIX, पृ० २३७, चित्र ४८–५०, ५२।

§ १२९. *पश्चिमी चालुक्य* :—क्षेत्र : पश्चिमी दक्कन। ईसा की सातवीं शताब्दी के आरम्भ के पश्चात् चालुक्य दो प्रमुख शाखाओं में बँट गये—पश्चिमी दक्कन के पश्चिमी चालुक्य, और पल्लव देश के उस भाग के पूर्वी चालुक्य जो कृष्णा और गोदावरी के बीच स्थित था। दोनों ही शाखाओं के सोने के सिक्कों पर चालुक्य चिह्न—एक वराह है, और ये पञ्चमार्क लगाने की एक ऐसी विशिष्ट भारतीय विधि की दृष्टि से उल्लेखनीय हैं जिसके अनुसार सम्पूर्ण आकृति के प्रत्येक भाग को अलग-अलग पञ्चों द्वारा सिक्के पर आहत किया गया है।

पश्चिमी चालुक्यों के अधिकांश सिक्के मोटे सोने के तथा अक्सर प्याले के आकार के हैं (**फलक ५, १७**)। इलियट (इकासइ पृ० ६७) इन्हें उन कदम्ब 'पद्मटङ्कों' (देखिये नीचे § १३१) का अनुकरण मानते हैं जो इसी प्रकार बने हैं और इनकी तिथि इन्होंने ईसा की पाँचवीं अथवा छठवीं शताब्दी निश्चित की है। किन्तु इनमें से किसी के लिये भी इतने पहले का समय निश्चित करने के कोई प्रमाण नहीं हैं, और पूर्वी चालुक्यों के सिक्कों की तुलना के आधार पर इन्हें कदाचित् बहुत बाद का मानना चाहिये। ऐसे अन्य सिक्कों के लिये जिन्हें पश्चिमी चालुक्यों का माना गया है, देखिये हूल्श, इए. १८९७, पृ० ३२२, फलक २, २८. २९।

इकासइ. पृ० ३९, फलक १, १९–२३; फलक ३, ८१–८६।

§ १३०. पूर्वी चालुक्यों के ज्ञात सिक्कों की तिथियाँ निश्चित हैं। काँसे के मिश्रण से युक्त धातु के कुछ सिक्कों के विज़गापट्टम जिले के येल्लमञ्चिली में कुछ नमूने मिले हैं जिन पर विष्णुवर्धन, ६६३–६७२ ई० की उपाधि 'विषम-सिद्धि' लिखी है।

मदरास गव. म्यूजियम रिपोर्ट १८९४, पृ० ४; हुल्श, इए. १८९६, पृ० ३२२, फलक २, ३४।

अन्य सिक्कों पर चालुक्यचन्द्र, अथवा शक्तिवर्मन (१०००–१०१२ ई०) तथा राजराज द्वितीय (१०२१–१०६२ ई०) के नाम अंकित हैं। इन सिक्कों पर चालुक्य

चिह्न वराह तथा लेख का प्रत्येक अक्षर पतले सोने पर ठप्पे से अंकित है। इन सिक्कों का पूर्वी चालुक्यों का ही होना निर्विवाद प्रतीत होता है; किन्तु यह उल्लेखनीय है कि अधिकांश ज्ञात नमूने अराकान तट के उस पार छेडुव द्वीप में ही मिले हैं।

फ्लीट, इए. १८९०, पृ० ७९; इकासइ. पृ० ६७, फलक ३, ७९. ८०, ने इन सिक्कों को ईसा की ६ वीं अथवा ७ वीं शताब्दी के पश्चिमी चालुक्यों का माना है। तुकी० फेरे, प्रो. वंससो. १८७२, पृ० ३। भारत में मिले नमूनों के लिये देखिये, हुल्श, इए. १८९६, पृ० ३२१, फलक २, २४. २५, जो यह भी उल्लेख करते हैं इन सिक्कों की तिथियाँ शासनकारी वर्षों के अनुसार अंकित हैं।

§ *१३१. कदम्ब* :—क्षेत्र : उत्तर-पश्चिमी दक्खन और उत्तरी मैसूर। बनावट तथा निर्माण की दृष्टि से सोने के कदम्ब सिक्के पश्चिमी चालुक्यों के सिक्कों के ही समान हैं (§ १२९)। इलियट इन 'पद्म-टङ्कों' (फलक ५, १८)—सिक्कों के बीच में कमल बना होने के कारण ही इन्हें इस नाम से पुकारा जाता है—को ईसा की ५ वीं और ६ वीं शताब्दी में कदम्ब स्वतंत्रता के समृद्धिकाल का माना है; किन्तु पश्चिमी चालुक्यों के सिक्कों की ही भाँति इन्हें भी सम्भवतः पर्याप्त बाद के समय का ही मानना चाहिये। इन पर मिलनेवाले संस्कृत अक्षरों का स्वरूप निश्चित रूप से इस मत की पुष्टि करता है।

इकासइ. पृ० ६६, फलक १, ७. ८. १०. ११. १३–१७; फलक २, ६६–७८।

§ *१३२. राष्ट्रकूट* :—क्षेत्र : बम्बई प्रान्त के कन्नड़ जिले। किसी भी सिक्के को इस वंश के चरमोत्कर्ष काल (७५७–९७३ ई०) का निर्धारित नहीं किया जा सकता। सुराष्ट्र के क्षत्रपों के अनुकरण के आधार पर बने चाँदी के सिक्कों के लिये, जिन्हें कृष्णराज राष्ट्रकूट, ३७५–४०० ई०, का माना गया है, देखिये ऊपर § १००।

§ *१३३. कल्याणपुर के कलचुरि* :—इस वंश के दूसरे राजा, सोमेश्वर (११६७–११७५ ई०), के सिक्के ज्ञात हैं।

इकासइ. पृ० ७८, फलक ३, ८७।

§ *१३४. देवगिरि के यादव* :—क्षेत्र : कल्याणपुर और पश्चिमी चालुक्य साम्राज्य (११८७–१३११ ई०) के उत्तरी जिले। इनके सिक्कों के लिये देखिए इकासइ. पृ० ७२, फलक ३, ८८–८९।

§ *१३५. द्वारसमुद्र के यादव* :—क्षेत्र : मैसूर (१०४६–१३१० ई०)। इनके सिक्कों के लिये देखिये इकासइ. पृ० ८०, फलक ३, ९०–९२।

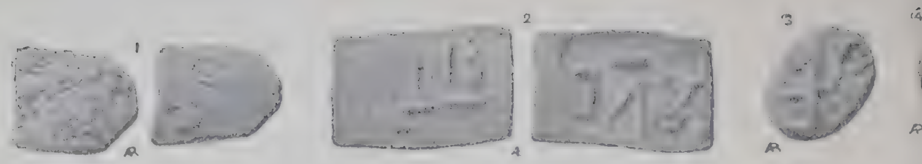
§ *१३६. वारङ्गल के काकतीय* :—क्षेत्र : हैदराबाद (११९०–१३२३ ई०); अथवा इनके उत्तराधिकारी, कोडाविडु के वेम रेड्डी (१३६१– ? १४५० ई०)। इन वंशों के सिक्कों के लिये देखिये इकासइ. पृ० ८२, १०१, फलक ३, ९३–९५।

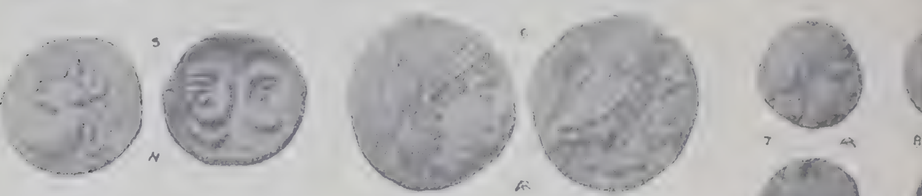
§ *१३७. विजयनगर* :—इस साम्राज्य का उदय भारतीय इतिहास तथा मुद्राशास्त्र के क्षेत्र की एक युगान्तकारी घटना है; क्योंकि जहाँ इसने कृष्णा के दक्षिण के देशों में प्रभुसत्ता-सम्पन्न होकर सिक्कों के दक्षिण भारतीय स्वरूप को सुरक्षित रक्खा, वहीं कृष्णा के उत्तर के देश सामान्यतया मुसलमानों के हाथ में चले गये और उस क्षेत्र में कुछ अपवादों के अतिरिक्त भारतीय सिक्का-शैली का स्थान मुसलमान स्वरूप ने ग्रहण कर लिया।

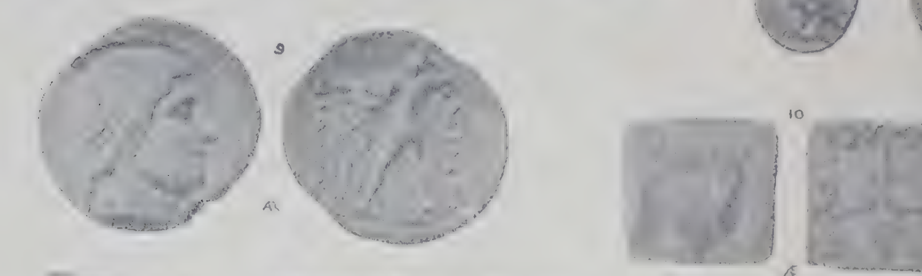
हुल्श, इऐ. १८९१, पृ० ३०१, फलक १. २; वही १८९२, पृ० ३२१, फलक १; वही १८९६, पृ० ३१७, फलक १, ३–६।

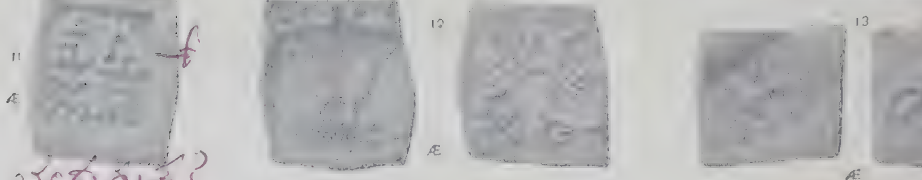


फलक १

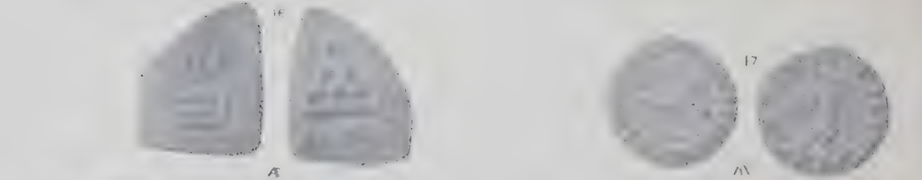














फलक १

१. पञ्चमार्क सिक्का § ५

अग्र. अनेक चिह्न

पृष्ठ. दो प्रतीक, जिनमें से एक को बनारस जिले का द्योतक माना गया है (क. आसरि. पृ० ५६, फलक १. १४)।

AR. वजन : ५२.८ ग्रेन = ३.४१ ग्राम।

२. गिल्ड-टोकेन § ६

अग्र. लौहदण्ड; ऊपर खरोष्ठी में 'दुजक' अथवा 'दोजक' लिखा है।

पृष्ठ. ब्राह्मी अक्षरों में 'नेगमा'।

Æ. [बूहलर : इण्डियन स्ट. ३, पृ० ४९ (द्वि० सं०)।

३. पर्शियन सिग्लोस § ७

अग्र. दाहिने ओर अर्द्ध-झुका एक धनुर्धर के रूप में व्यक्त आरम्भिक अकामेनिड राजा। पञ्चमार्क प्रतीक से युक्त।

AR. वजन : ८३.५ ग्रेन = ५.४१ ग्राम [रैपसन, जएसो. १८९५, पृ० ८७५, फलक १]।

४. वही।

पृष्ठ. ठप्पे का गड्ढा, और एक प्रति-चिह्न जो ब्राह्मी अक्षरों में 'यो' के समान है।

AR. वजन : ८४.५ ग्रेन=५.४७ ग्राम [रैपसन जएसो. १८९५, पृ० ८७५, फलक १।

५. भारत में आहत पर्शियन डबल डेरिक § ७.

अग्र. अकामेनिड राजा (सम्भवतः डेरियस ३ कोडोमेन्नस, ई० पू० ३३७–३३०) जिसे दाहिनी ओर आधे झुके धनुर्धर के रूप में व्यक्त किया गया है। पीछे ΣTA; नीचे MNA; सामने एक चिह्न।

पृष्ठ. अनियमित ठप्पा, जिस पर वक्र रेखाओं से निर्मित एक परम्परागत नमूना है।

AV. वजन २६२.७ ग्रेन=१७.०२ ग्राम [हेड : हिस्टोरिया नूमोरम, पृ० ७००। अग्र. पर राजा की मूर्ति के पीछे और नीचे के लेख को '२ स्टेटर्स = १ मिना' के अर्थ में ग्रहण किया गया है।

६. एक एथेनियन सिक्के का भारतीय अनुकरण § ९

अग्र. दाहिनी ओर मुँह किये एथेना का सर, और उसके पीछे एक चिह्न।

पृष्ठ. दाहिनी ओर मुँह किये उलूक, जिसके सामने $A\Theta E$; पीछे अंगूर का एक गुच्छा है।

AR. वजन : २५७.८ ग्रेन = १६.७ ग्राम [हेड, ब्रिकै., ऐटिका, पृ० २५, एथेन्स, संख्या२६७, फलक ७, ३।

७. वही.

अग्र. दाहिनी ओर मुँह किये एथेना का सर जिसके पीछे अंगूर का गुच्छा है।

पृष्ठ. बाँये ओर मुँह किये श्येन, जो पीछे देख रहा है।

AR. वजन : ५४ ग्रेन = ३.४९ ग्राम। [हेड, ब्रिकै., ऐटिका, पृ० २६, एथेन्स, सं० २७४, फलक ७, ९।

८. सोफाइटीज़ § ९

अग्र. दाहिनी ओर मुँह किये टोपधारी राजा का सर।

पृष्ठ. $\Sigma\Omega\Phi YTOY$ दाहिनी ओर मुँह किये मुर्गा, जिसके ऊपर बाँये ओर एक चिह्न।

AR. वजन : ५८. ३ ग्रेन = ३.७७ ग्राम [गा. पृ० २, फलक १, ३।

९. दियोदतस § १२

अग्र. दाहिनी ओर मुँह किये किरीटयुक्त राजा का सर।

पृष्ठ. $BA\Sigma IAE\Omega\Sigma \Delta IO\Delta OTOY$ बायें ओर बढ़ते और वज्र फेंकते हुए ज्यूस, जिसकी बायीं भुजा पर एक ढाल है। इसके पैरों के पास बांयें ओर मुंह किये श्येन; ऊपर श्येन, और पुष्पमाला।

AR. वजन : २५७.१ ग्रेन = १६.६५ ग्राम [गा., पृ० ३, फलक १, ६।

१०. दिमित्रियस § १८

BASILEŌSANIKITOYDT M TTRIO

अग्र. *ΒΑΣΙΛΕΩΣ ΑΝΙΚΗΤΟΥ ΔΗΜΗΤΡΙΟΥ* । हाथी की खोपड़ी का शिरस्त्राण और मुकुट पहने तथा दाहिनी ओर मुँह किये राजा की अर्धमूर्ति ।

पृष्ठ. खरोष्ठी अक्षरों में 'महरजुस अपरजितस देमेत्रियुस' लिखा है; बीच में पंखयुक्त वज्र, जिसके नीचे दाहिनी ओर एकाक्षर चिह्न ।

Æ. [क. न्यूक्रा. १८६९ पृ० १२७, फलक ४, ११ = गा. पृ० १६३, फलक ३०, ३ ।

११. तक्षिला; एक ठप्पेवाला सिक्का § ५६

अग्र. ठप्पे में बायें ओर गेंदों का ढेर, दाहिने चैत्य; नीचे लहरदार रेखा, और अनिश्चित डिजाइन (? अंगूर की टहनियाँ) ।

Æ. [तुकी. क. काऐइ. पृ० ६१, फलक २. ९ ।

१२. पन्तलेव § २१. ५६

अग्र. 'राजिनो पन्तलेवस'; भारतीय नर्तकी की मूर्ति ।

पृष्ठ. ठप्पे में *ΒΑΣΙΛΕΩΣ ΠΑΝΤΑΛΕΟΝΤΟΣ* । दाहिने मुँह किये सिंह ।

Æ [गा. पृ० ९, फलक ३, ९] ।

१३. तक्षिला; दो ठप्पों से बना सिक्का § ५६

अग्र. दाहिनी ओर मुँह किये हाथी; ऊपर चैत्य

पृष्ठ. ठप्पे में, बायें ओर मुँह किये सिंह; ऊपर स्वस्तिक; सामने चैत्य ।

Æ. [क. काऐइ. पृ० ६२, फलक ३, २ ।

१४. मास § २९

अग्र. दाहिने ओर मुँह किये हाथी का मस्तक जिसके गले से घंटा लटक रहा है ।

पृष्ठ. *ΒΑΣΙΛΕΩΣ ΜΑΥΟΥ*; चिह्न विशेष; बायें ओर एकाक्षर चिह्न ।

Æ. [तुकी. गा. पृ० ६८, फलक १६, १ ।

१५. वही ।

अग्र. *ΒΑΣΙΛΕΩΣ ΒΑΣΙΛΕΩΝ ΜΕΓΑΛΟΥ ΜΑΥΟΥ* । बायें हाथ में त्रिशूल लिये और दाहिना पाँव एक नदी-देवता के कन्धे पर रक्खे मूर्ति ।

पृष्ठ. खरोष्ठी में 'रजतिरजस महतस मोअस'; दो लतरों के बीच में खड़ी स्त्री मूर्ति; नीचे दाहिनी ओर एकाक्षर चिह्न ।

Æ. [तुकी. गा. पृ० ७०, फलक १७, १ ।

१६. अगथुक्लेय § २१

अग्र. खरोष्ठी अक्षरों में लिखा 'हितजसमे'; चौकोर रेलिङ्ग के घेरे में वृक्ष ।

पृष्ठ. खरोष्ठी में 'अकथुक्रेयस'; चैत्य, और उसके ऊपर एक तारा ।

Æ. [बूहलर, वीमा. ८, पृ० २०६ ।

१७. वोनोनस और स्पलगदम § ३०

अग्र. *ΒΑΣΙΛΕΩΣ ΒΑΣΙΛΕΩΝ ΜΕΓΑΛΟΥ ΟΝΩΝΟΥ* । दाहिनी ओर तोमर लिये अश्वारोही राजा ।

पृष्ठ. खरोष्ठी में 'स्पलहोरपुत्रस ध्रमैस स्पलगदमस' । सामने मुँह किये ज्यूस जो दाहिने हाथ में वज्र तथा बायें में राजदण्ड लिये हुये हैं; नीचे, बाँये एकाक्षर चिह्न ।

AR. वजन : ३६.५ ग्रेन=२.३६ ग्राम [गा. पृ० ९९, फलक २१, १० ।

१८. यूथीदिमस § १८. २८

अग्र. किरीटयुक्त राजा का सर जो दाहिने मुँह किये हुये है ।

पृष्ठ. *ΒΑΣΙΛΕΩΣ ΕΥΘΥΔΗΜΟΥ* । बायें मुँह किये चट्टान पर बैठा, और दाहिने हाथ में चट्टान पर टिकी गदा लिये हेराक्लीस; नीचे दाहिने एकाक्षर चिह्न ।

AR. वजन : २५४.६ ग्रेन = १६.४९ ग्राम [गा. पृ० ४, फलक १, ११] ।

१९. यूथीदिमस के सिक्के का शक अनुकरण § २८

अग्र. यूथीदिमस के मस्तक का एक भ्रष्ट अनुकरण ।

पृष्ठ. यूथीदिमस के स्वरूप का एक भ्रष्ट अनुकरण; बायें ओर यूनानी अक्षरों में नाम की नकल; दाहिने आर्मीनियन अक्षरों में लेख, जिसे अभी निश्चित रूप से पढ़ा नहीं जा सका है ।

AR. वजन : १७४ ग्रेन=११.२७ ग्राम [क. न्यूक्रा. १८८९, पृ० ३०७, फलक १३, ५ ।

फलक २



१. मियोस अथवा हेरोस § ३५

अग्र. दाहिने ओर मुँह किये किरीटयुक्त राजा की अर्धमूर्ति ।

पृष्ठ. *TYIANN□VNT□Σ M* [अथवा *H*] *IA□Y ΣANAB K□HAN□Y* दाहिनी ओर मुँह किये अश्वारोही राजा; पीछे विजय और पुष्पमाला ।

AR. वजन १८४.४ ग्रेन = ११.९४ ग्राम [क. न्यूक्रा. १८८८, पृ० ४७, फलक ३, २; गा. पृ० ११६, फलक २४, ७ ।

२. हिर्कोदस § ३६

अग्र. *YPKWΔOY* । दाहिनी ओर मुँह किये राजा की किरीटयुक्त अर्धमूर्ति ।

पृष्ठ. *MAKAPOY APΔHΘPOY* । सामने मुँह किये सशस्त्र मूर्ति जिसके स्कन्ध से ज्वाला निकल रही है और दाहिने हाथ में एक माला है ।

AR. वजन ४४ ग्रेन = २.८५ ग्राम [क. न्यूक्रा. १८८९, पृ० ३१०, फलक १३, १५ ।

३. जियोनिसस § ३४

अग्र. घिसा हुआ यूनानी लेख जो सम्भवतः *MANNIΓAOY YIOY ΣATPAΠ-OY ZEIWNIΣOY*, को व्यक्त करता है; दाहिनी ओर मुँह किये अश्वारोही क्षत्रप; अनेक खरोष्ठी अक्षर; सामने एक प्रतीक ।

पृष्ठ. खरोष्ठी में 'मनिगुलस छत्रपस पुत्रस छत्रपस जिहोनिअस' लिखा है । बायें ओर दाहिने मुँह किये क्षत्रप; दाहिने ओर बायें मुँह किये और हाथ में पुष्पमाला लिये नगर; बायें और दाहिने ओर के स्थानों में खरोष्ठी अक्षर ।

AR. वजन : १४९.६ ग्रेन = ९.६९ ग्राम [तुकी. क. न्यूक्रा. १८९०, पृ० १६८, फलक १५, १ ।

४. स्ट्राटो द्वितीय § ३३

अग्र. *BACIΛEΩC CΩTHPOC CTPATΩNOC YIOY* । *CTPA-TΩNOC*; दाहिने मुँह किये किरीटयुक्त राजा की अर्धमूर्ति ।

पृष्ठ. खरोष्ठी लेख [क. के पाठ के लिये देखिये गा. उस्था.]; बायें मुँह किये और वज्र तथा ढाल लिये एथेना ।

AR. वजन : ३७ ग्रेन = २.३९ ग्राम [तुकी. गा. पृ० १६८, फलक ३१, ७ ।

५. रञ्जुबुल, जिसका स्ट्राटो द्वितीय के सिक्कों से अनुकरण किया गया है § ३३

अग्र. *BACIΛEI BACIΛEWC CWTHPOC PAIY*; दाहिने मुँह किये राजा की किरीटयुक्त अर्धमूर्ति ।

पृष्ठ. खरोष्ठी में 'अप्रतिहतचक्रस छत्रपस । रजुबुलस'; दाहिने मुँह किये किरीटयुक्त राजा की अर्धमूर्ति ।

AR. वजन : ३८ ग्रेन = २.४६ ग्राम [गा. पृ० ६७; फलक १५, ११ ।

६. रञ्जुबुल—राजुबुल § ३३

अग्र. ब्राह्मी में 'महाखतपस राजुबुलस' लिखा है; सामने मुँह किये मूर्ति ।

Æ. [भ. जएसो. १८९४, पृ० ५४७, फलक ४ ।

७. हरमियस और कुजुल कडफाइसिस § ६५

अग्र. *BAΣIΛEΩΣ ΣTHPOΣΣY* । *EPMAIOY*; दाहिने मुँह किये किरीटयुक्त राजा की अर्धमूर्ति ।

पृष्ठ. खरोष्ठी में 'कुजुलकसम कुषनयवुगस ध्रमठिदस' लिखा है; सामने मुँह किये हेराक्लीस, जो दाहिने हाथ में गदा और बायें में व्याघ्र-चर्म लिये हुए है ।

Æ. [गा. पृ० १२०, फलक २५, १ ।

८. कुजुल कडफाइसिस § ६५

अग्र. *K□PCNAK□Z□VA□* । *KAΔΦIZ□V*; दाहिने मुँह किये किरीटयुक्त राजा का मस्तक ।

Æ. [गा. पृ० १२२, फलक २५, ४ ।

९. कोजोल कडफिस, जिसका ऑगस्टस के रोमन दीनारों से अनुकरण किया गया है § ६६

अग्र. *XOPANCY ZAOOY KOZOΛA KAΔΛΦEC*; दाहिनी मुँह किये राजा का किरीटयुक्त मस्तक।

Æ. [तुकी. गा. पृ० १२३, फलक २५, ५।

१०. नामविहीन राजा, सोटर मेगस § ६७

अग्र. दाहिनें मुँह किये किरीटयुक्त राजा की अर्धमूर्ति; = जिसके हाथ में माला और पीछे एक प्रतीक है।

पृष्ठ *BACIΛEYC BACIΛEWN CWTHP MEΓAC*; दाहिने मुँह किये अश्वारोही राजा।

Æ. तुकी गा. पृ० ११४, फलक २४, २।

११. विम कडफाइसिस § ७१

अग्र. *BACIΛEYC OOHMO KAΔ-ΦICHC*; बायें मुँह किये और किरीट तथा टोप पहने राजा की अर्धमूर्ति।

पृष्ठ. 'महरजस रजदिरजस सर्वलोगईश्वररस महिश्वरस विम-कप्ति(?)शस' लेख। सामने मुँह किये और दाहिने हाथ में त्रिशूल तथा बायें में मृगचर्म लिये शिव; बायें और दाहिने स्थानों में प्रतीक।

AV. वजन : १२३ ग्रेन = ७.९७ ग्राम [तुकी. गा. पृ० १२५, फलक २५, ९।

१२. वासुदेव §§ ७२. ७४

अग्र. *ÞAONANO ÞAO BAZOΔHO KOÞANO*; बायें मुँह खड़ा राजा जिसके बायें हाथ में भाला है और वह दाहिने हाथ से वेदिका पर अक्षत छिड़क रहा है।

पृष्ठ. *OHÞO*; सामने मुँह किये, और बायें हाथ में त्रिशूल तथा दाहिने में पाश लिये शिव; उनके पीछे बायें मुँह वृषभ; ऊपर, दाहिने प्रतीक

AV. वजन : १२४.८ ग्रेन=८.०८ ग्राम [तुकी. गा. पृ० १५९; फलक २९, १०।

१३. बाद के महान् कुषाण § ७४

अग्र. प्रत्यक्षतः राजा की मूर्ति का वासुदेव से अनुकरण किया गया है, जब कि लेख कनिष्क का अनुकरण है; नागरी अक्षर—बायें 'ग'; मध्य में 'घो'; दाहिने 'हु'।

पृष्ठ. वासुदेव का स्वरूप।

AV. वजन : १२०.२ ग्रेन = ७.७८ ग्राम [क. न्यूका. १८९३, पृ० १२०, फलक ८. १६।

१४. बाद के महान् कुषाण § ७४.

अग्र. राजा की मूर्ति तथा लेख का कनिष्क से अनुकरण किया गया है; नागरी अक्षर—बायें 'ह'; दाहिने 'वि'।

पृष्ठ. *APΔOXÞO*; सामने मुँह सिंहासनासीन देवी, जिसके दाहिने हाथ में पाश और बायें में सींघ है; ऊपर, बायें, प्रतीक; नीचे, बायें नागरी अक्षर 'ल'।

AV. वजन : १२१.४ ग्रेन = ७.८६ ग्राम [क. न्यूका. १८९३, पृ० ११९, फलक ८, २।

१५. शक-ससेनियन : वरह्रान् ५, ४२२–४४० ई० (क). § ७५

अग्र. वासुदेव से गृहीत राजा की मूर्ति जो मेष सींघों से अलंकृत शिरस्त्राण धारण किये हुए है; भ्रष्ट यूनानी अक्षरों में लिखे लेख में वरह्रान का नाम तथा उपाधियाँ हैं।

पृष्ठ. वासुदेव के सिक्कों से गृहीत शिव और वृषभ; भ्रष्ट यूनानी अक्षरों में लेख।

AV. वजन : १२१ ग्रेन = ७.८४ ग्राम [क. न्यूका. १८९३, पृ० १८२, फलक १३. १५।

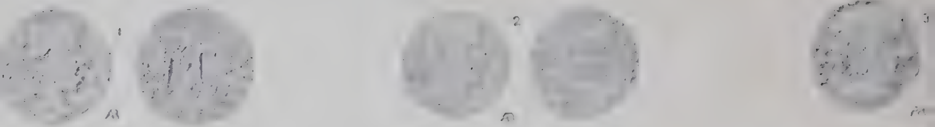
१६. किदार कुषण : कृतवीर्य § ७६

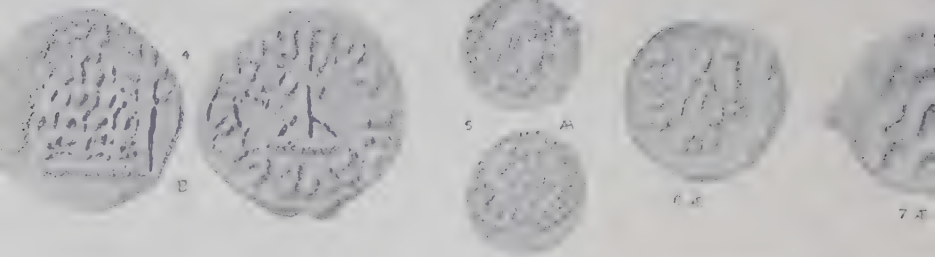
अग्र. बायें मुँह खड़ा राजा; नागरी अक्षरों में दाहिनी भुजा के नीचे 'धर्व' और बायीं के नीचे 'किदा(र)' लिखा है।

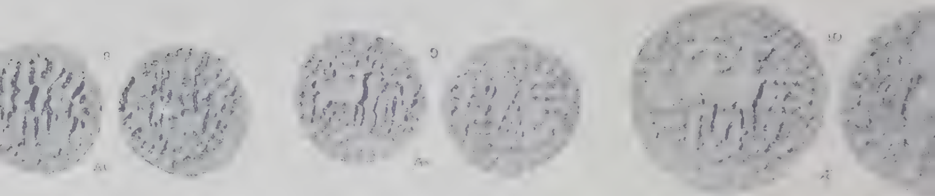
पृष्ठ. नागरी अक्षरों में 'श्री कृतवीर्य' लिखा है; बैठी हुई देवी।

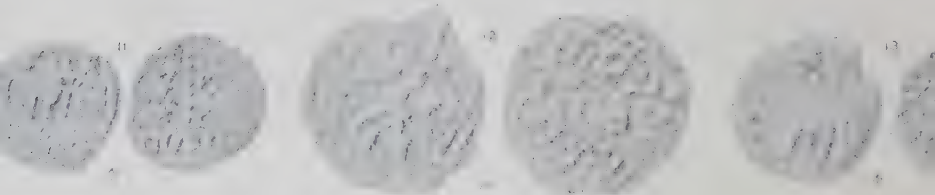
AV. वजन : १२० ग्रेन = ७.७७ ग्राम [क. न्यूका. १८९३, पृ० २०१; फलक १५, ११।

फलक ३













अग्र. दाहिने चैत्य की ओर मुँह किये वृषभ; ऊपर "उज्जैन" प्रतीक।

पृष्ठ. ब्राह्मी में 'बहसतिमितस'; रेलिङ्ग में वृक्ष; जिसके दोनों ओर प्रतीक।

Æ. [क. काऐइ. पृ० ७४, फलक ५, ११।

१२. वही : ढला सिक्का।

अग्र. बायें प्रतीक की ओर मुँह किये वृषभ।

पृष्ठ. रेलिङ्ग में वृक्ष; नीचे चैत्य; बायें 'धर्म चक्र' और त्रिशूल; दाहिने 'स्वस्तिक' तथा अन्य प्रतीक।

Æ. [क. काऐइ. पृ० ७३, फलक ५. ७।

१३. यौधेय § ६०

अग्र. दाहिने मुँह हाथी।

पृष्ठ. ब्राह्मी में लेख जिसे पूरी तरह पढ़ा नहीं जा सका है और जिसमें 'यौधेयन' शब्द हैं; दाहिने ओर रेलिङ्ग में वृक्ष की ओर मुँह किये वृषभ।

Æ. [क. काऐइ. पृ० ७७, फलक ६, २।

१४. वही

अग्र. खड़ी मूर्ति; दोनों ओर प्रतीक।

पृष्ठ. ब्राह्मी में 'यौधेयगणस्य जय द्वि'; दाहिने हाथ में भाला लिये खड़ा योद्धा।

Æ [क. काऐइ. पृ० ७७, फलक ६, ७।

१५. वही ? ब्रह्मण्य देव।

अग्र. सामने मुँह खड़ी मूर्ति; दाहिने रेलिङ्ग के बीच वृक्ष; बायें त्रिशूल और चैत्य।

पृष्ठ. ब्राह्मी में 'भगवत स्वामिन ब्रह्मण्य [देव] यौधेय...'; सामने मुँह छः सर वाले देवता (कार्तिकेय, षडानन, ब्रह्मण्य) जिनके दाहिने हाथ में भाला है।

AR. वजन : २६ ग्रेन = १.६८ ग्राम [क. काऐइ. पृ० ७८, फलक ६. ११।

१६. पञ्चाल (शुङ्ग) : फल्गुनीमित्र § ५३

अग्र. कमल पर खड़ी मूर्ति; बायें प्रतीक।

पृष्ठ. ब्राह्मी अक्षरों में 'फगुनिमित्रस'; ऊपर तीन प्रतीक।

Æ. [तुकी. क. काऐइ. पृ० ८२, फलक ७, ५।

१७. मथुरा § ५२

अग्र. ब्राह्मी में 'उपातिक्या'; ऊपर 'स्वस्तिक'।

Æ. [क. काऐइ. पृ० ८६, फलक ८, १।

१८. जनपद § ४७

अग्र. बायें मुँह अश्व।

पृष्ठ. खरोष्ठी में '···पुत्त जनपदस'; रेलिङ्ग में वृक्ष।

Æ. [अप्रकाशित।

१९. वही.

अग्र. बाँयें मुँह वृषभ

पृष्ठ. ब्राह्मी में '···जनपदस'; खड़ी मूर्ति।

Æ. [क. काऐइ. पृ० ८९, फलक ८. १९।

२०. आर्जुनायन § ४२

अग्र. बायें मुँह वृषभ।

पृष्ठ. ब्राह्मी में 'आर्जुनायनान'; खड़ी मूर्ति; बायें प्रतीक।

Æ. [क. काऐइ. पृ० ९० फलक ८. २०।

१. क्षहरात : नहपान । ७८

अग्र. दाहिने मुँह क्षत्रप का सर; यूनानी अक्षरों में लेख के चिह्न।

पृष्ठ. ब्राह्मी अक्षरों में 'राज्ञो क्षहरातस नहपानस'; खरोष्ठी में 'रञो छहरतस नहपनस'; वज्र और बाण।

AR. वजन : २९. २ ग्रेन = १.८८ ग्राम [भ. जएसो. १८९०, पृ० ६४२, फलक १।

२. सुराष्ट्र के क्षत्रप : चष्टन § ८०

अग्र. दाहिने मुँह क्षत्रप का सर; यूनानी अक्षरों में लेख के चिह्न।

पृष्ठ. ब्राह्मी में 'राज्ञो महाक्षत्रपस घसमोतिक-पुत्रस चष्टनस'; खरोष्ठी में 'चत(?)नस'; चैत्य; दाहिने तारा; बायें बालचन्द्रमा।

AR. वजन : २५ ग्रेन = १.६२ ग्राम [क. कामेइ. पृष्ठ ६, फलक १, ६।

३. दामसेन, तिथियुक्त सिक्का § ८३

अग्र. दाहिने मुँह क्षत्रप का सर; पीछे १०० + ५० + ३ तिथि, और यूनानी में लेख के चिह्न।

पृष्ठ. ब्राह्मी में 'राज्ञो महाक्षत्रपस रुद्रसीहस पुत्रस राज्ञो महाक्षत्रपस दामसेनस'; चैत्य; दाहिने तारा; बायें बालचन्द्रमा।

AR. वजन : ३४ ग्रेन = २.२ ग्राम (तुकी० भ. जएसो. १८९०, पृ० ६५३, फलक ११।

४. अन्ध्र : गोतमीपुत, विलिवायकुर § ८६

अग्र. रेलिङ्ग के बीच चैत्य; ऊपर स्वास्तिक; दाहिने वृक्ष।

पृष्ठ. 'रञो गोतमीपुतस विलिवायकुरस'; धनुष-बाण।

Æ. [तुकी. क. काऐइ. पृ० १०९, फलक १२. ६।

५. सिरियञ गोतमीपुत सातकणि § ८७

अग्र. 'सरियञ सातकणिस रञो गोतमीपुतस'; दाहिने मुह राजा का सर।

पृष्ठ. 'सिरियञ सातकणिस ···नस गोतमीपुतस'; दाहिने चैत्य; बायें "उज्जैन" प्रतीक (देखिये § ५८)।

AR. [इक्रासइ. पृ० २५। पृष्ठ. के लेख को, जबाएसो. १५. पृ० ३०५ ने भिन्न रूप से पढ़ा है

६. वटस्वक § ५९

अग्र. 'वटस्वक' ब्राह्मी अक्षरों में; चैत्य; नीचे गेंदों का ढेर; दाहिने पूजन करती हुई मूर्ति।

Æ. [बूह्लर इण्ड. स्ट्र. ३, पृ० ४७ (त्रि० सं०)।

७. काड : ढला सिक्का § ४३

अग्र. और **पृष्ठ** (समान) : ब्राह्मी अक्षरों में 'काडस' लेख; ऊपर सर्प।

Æ. [क. काऐइ. पृ० ६२, फलक २, २१।

८. औदुम्बर : धरघोष § ४३

अग्र. 'महदेवस रञ धरघोषस। ओदुम्बरिस'; सामने स्थान में बेंड़े खरोष्ठी में 'विश्वमित्र'; शिव (अथवा विश्वामित्र ?) की खड़ी मूर्ति।

पृष्ठ. ब्राह्मी में वही लेख; दाहिने रेलिङ्ग के भीतर वृक्ष; बाँयें त्रिशूल-कुठार।

AR. : ३७.५ ग्रेन = २.४२ ग्राम [क. काऐइ. पृ० ६७, फलक ४, १।

९. कुणिन्द : अमोघभूति § ५०

अग्र. 'रञ कुणिंदस अमोघभूतिस महरजस' खरोष्ठी में; एक स्त्री की ओर दाहिने मुँह मृग; ऊपर प्रतीक; नीचे चैत्य।

पृष्ठ. ब्राह्मी में वही लेख; बीच में चैत्य और उसके ऊपर त्रिशूल; दाहिने रेलिङ्ग में वृक्ष; बाँयें 'स्वस्तिक' तथा अन्य प्रतीक।

AR. वजन : ३४ ग्रेन = २.२ ग्राम [क. काऐइ. पृ० ७२, फलक ५, १।

१०. वही चित्रेश्वर (?)।

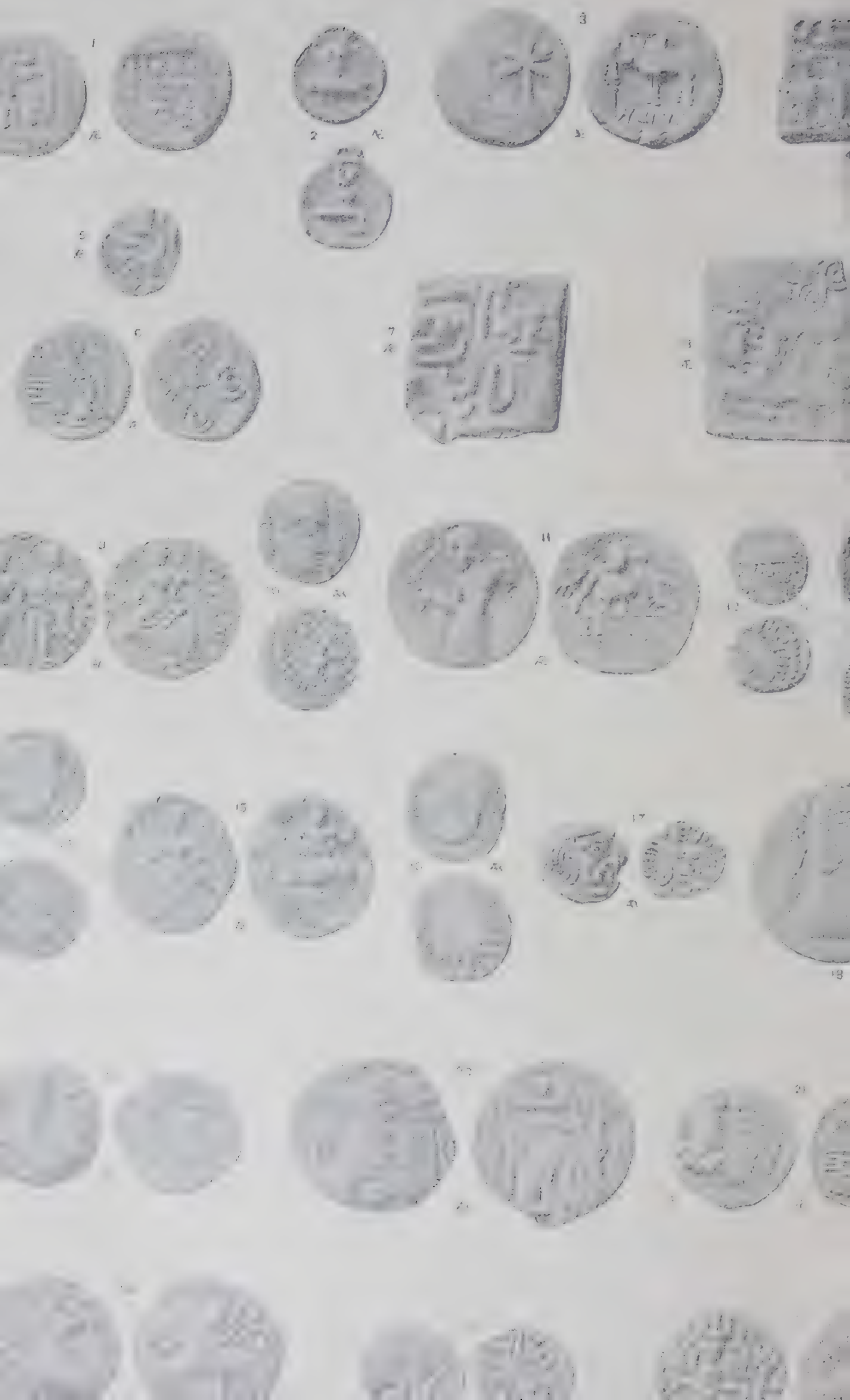
अग्र. ब्राह्मी में 'भागवत चत्रेश्वर महात्मनः'; सामने मुँह और दाहिने हाथ में त्रिशूल-कुठार तथा बाँयें हाथ पर मृग-चर्म लिये शिव।

पृष्ठ. बाँयें मृग; ऊपर प्रतीक; दाहिने रेलिङ्ग में वृक्ष; बाँयें चैत्य और प्रतीक।

Æ [क. काऐइ. पृ० ७२; फलक ५, ५।

११. कोसाम्बी : बहसतिमित § ४९

फलक ४



फलक ४

१. मथुरा : हिन्दू राजा. रामदत्त § ५२

अग्र. सामने मुंह हाथी, इत्यादि ।

पृष्ठ. ठप्पे में ब्राह्मी अक्षरों में 'राज्ञो रामदतस'; खड़ी मूर्ति; दोनों ओर प्रतीक ।

Æ. [तुकी. क. काऐइ, पृ० ८८, फलक ८. १३

२. अयोध्या : ढला सिक्का § ४४

अग्र. बायें मुँह मछली; ऊपर स्वस्तिक ।

पृष्ठ. लौहदण्ड; ऊपर बालचन्द्रमा ।

Æ. [तुकी. क. काऐइ. पृ० ९१, फलक ९, ३ ।

३. वही : सूर्यमित्र ।

अग्र. दाहिने ताड़-वृक्ष की ओर मुँह किये मोर ।

पृष्ठ. ठप्पे में ब्राह्मी अक्षरों में 'सुय्यमित्रस'; बायें स्तम्भ की ओर मुँह किये वृषभ ।

Æ. [क' काऐइ. पृ० ९३, फलक ९. १४ ।

४. वही : ढला सिक्का । धनदेव ।

अग्र. ब्राह्मी में 'धनदेवस'; दाहिने प्रतीक की ओर मुँह किये वृषभ ।

Æ. [तुकी. क. काऐइ. पृ० ९२, फलक ९, ८ ।

५. उज्जैन § ५८

पृष्ठ. ब्राह्मी अक्षरों में 'उजेनि(य)'; ऊपर मनुष्य का हाथ ।

Æ. [क. काऐइ. पृ० ९८, फलक १०, २० ।

६. वही ।

अग्र. "उज्जैन" प्रतीक; नीचे मछलियों से युक्त नदी; बायें रेलिङ्ग के भीतर वृक्ष; ऊपर और दाहिने अन्य प्रतीक ।

पृष्ठ. "उज्जैन" प्रतीक ।

Æ. [क. काऐइ. पृ० ९८. फलक १०, १५ ।

७. एरण — एरकिन § ४६

अग्र. दाहिने से बायें लिखे अत्यन्त प्राचीन ब्राह्मी अक्षरों में 'धमपालस' ।

Æ. [बूहलर : इण्ड. स्ट. ३, पृ० ४४ और बाद (द्वि० सं०) ।

८. वही : पञ्चमार्क सिक्का ।

अग्र. अनेक प्रतीकों का पञ्चमार्क ।

Æ. [क. काऐइ. पृ० १००, फलक ११, १ ।

९. गुप्त : चन्द्रगुप्त प्रथम § ९०

अग्र. दाहिने 'चन्द्रगुप्त'; बायें 'कुमारदेवीश्रीः'; बायें मुंह खड़े राजा की ओर मुंह किये खड़ी रानी ।

पृष्ठ. 'लिच्छवयः'; दाहिनें मुंह सिंह पर सामने मुंह बैठी देवी जिसके दाहिने हाथ में पाश और बायें हाथ में एक अन्य वस्तु; ऊपर बायें प्रतीक ।

AV. वजन १२३.८ ग्रेन = ८.०२ ग्राम [स्मिथ जएसो. १८८९, पृ० ६३, फलक १, १ ।

१०. वही : स्कन्दगुप्त, चाँदी § ९१

अग्र. राजा का दाहिने मुंह सर; सामने तिथि
१००
 ४०
  ५

पृष्ठ. 'देव स्कन्दगुप्तोऽयं विजितावनिर् अवनिपतिर् जयति'; पंख फैलाये मोर ।

AR. वजन : ३४.३ ग्रेन = २.२२ ग्राम [तुकी. स्मिथ जएसो. १८८९, पृ० १३३, फलक ४, ३ ।

११. वही : चन्द्रगुप्त द्वितीय विक्रमादित्य § ९१

अग्र. बायें मुँह खड़ा राजा जिसके दाहिने उसके ऊपर छत्र लिये सेवक ।

पृष्ठ. 'महाराज श्री चन्द्रगुप्तः'; मनुष्य जैसी भुजाओं से युक्त गरुड़ ।

Æ. [तुकी. स्मिथ जएसो. १८८९, पृ० १३८, फलक ४, ९ ।

१२. वलभी § ९८

अग्र. दाहिने मुंह राजा का सर ।

पृष्ठ. लेख जिसे पूरी तरह पढ़ा नहीं जा सका है; त्रिशूल ।

AR. वजन : ३०.६ ग्रेन = १.९८ ग्राम । [तुकी. क. कामेइ. पृ० ८, फलक १, १६ ।

१३. मौखरि : ईशानवर्मन् § ९७

अग्र. बायें मुंह राजा का सर; सामने ५४ तिथि ।

पृष्ठ. 'विजितावनिर अवनिपति श्रीशानवर्म देव जयति'; पंख फैलाये मोर ।

AR. वज़न : ३५ ग्रेन = २.२६ ग्राम [क.

कामेइ. पृ० २०, फलक २, १२; तुकी. स्मिथ, जबंसो. १८९४, पृ० १९३।

१४. भीमसेन § ९९

अग्र. बायें मुह राजा का सर; सामने तिथि के चिह्न।

पृष्ठ. 'विजितावनिर् अवनिपति भीमसेन देव जयति'; पंख फैलाये मोर।

AR. वजन : ३४.२ ग्रेन = २.२१ ग्राम [तुकी. स्मिथ, जएसो. १८८९, पृ० १३५।

१५. शशाङ्क § ९३

अग्र. दाहिने 'श्री श(शाङ्क); नीचे 'जय'; बायें मुह वृषभ पर सामने मुँह बैठे शिव।

पृष्ठ. 'श्री शशाङ्क'; कमलासीन देवी।

AV. वजन : १४५ ग्रेन = ९. ३९ ग्राम [क. कामेइ. पृष्ठ १९, फलक २, ५।

१६. हूग : तोरमाग, गुप्त मुद्राशैली से अनुकृत चाँदी का सिक्का § १०५

अग्र. बायें मुँह राजा का सर; सामने तिथि ५२

पृष्ठ. 'विजितावनिर् अवनिपति श्री तोरमान देव जयति'; पंख फैलाये मोर।

AR. वजन : ३२.८ ग्रेन = २.१२ ग्राम [तुकी. क. कामेइ. पृ० २०, फलक २, ११।

१७. कृष्णराज § १००

अग्र. दाहिने मुँह राजा का सर।

पृष्ठ. (प्रत्यक्षतः) 'परम महेश्वरमहादेव्योः पादानुध्यात श्री कृष्णराज'; दाहिने मुंह बैठा वृषभ।

AR. वजन : ३१ ग्रेन = २ ग्राम [तुकी. क. कामेइ. पृ० ८, फलक १, १८।

१८. हूग : शाहि जवुव्ल (पतली चद्दर पर ठप्पे से बना सिक्का) § १०४

अग्र. 'शहि जवुव्लः'; दाहिने मुह राजा का मस्तक।

AR. वजन : ५६ ग्रेन = ३.६२ ग्राम [क. न्यूक्रा. १८९४, पृ० २७८, फलक ९. १०।

१९. वही : तोर माण)। § १०६

अग्र. दाहिने मुंह राजा की अर्ध-मूर्ति; पीछे 'ध'; सामने 'त्र' (?)।

पृष्ठ. 'तोर'; ऊपर चक्र।

Æ. [तुकी. क. न्यूक्रा. १८९४, फलक ९, १६; और स्मिथ : जबंसो. १८९४, पृ० २००।

२० वही : मिहिरकुल § १०६

अग्र. 'जयतु मिहिरकुल'; दाहिने मुंह राजा का अर्धमूर्ति; सामने वृषभध्वज; पीछे त्रिशूल।

पृष्ठ. अग्नि-वेदिका और सेवक, जिसका ससेनियन मुद्राशैली से अनुकरण किया गया है।

AR. वजन : ५४.२ ग्रेन = ३.५१ ग्राम [तुकी. क. न्यूक्रा. १८९४, पृ० २८१, फलक १०, ३।

२१. वही § १०६

अग्र. 'श्री मिहिरकुल'; दाहिने मुँह राजा की अर्धमूर्ति।

पृष्ठ. 'जयतु वृष'; बायें मुह वृषभ।

Æ. तुकी. क. न्यूक्रा. १८९४, पृ० २८०, फलक १०, १।

२२. कश्मीर : यशोवर्मन् § ११२

अग्र. खड़ा राजा; बायें हाथ के नीचे 'किदा(र)'।

पृष्ठ. 'श्री यशोवर्म'; बैठी देवी।

AV. वजन : ११२ ग्रेन = ७.२५ ग्राम [क. कामेइ. पृ० ४४; फलक ३, ११।

२३. वही : हर्षदेव, जिसका कोङ्कदेश (देखिये § १२५) की मुद्राशैली से अनुकरण किया गया है § ११२।

अग्र. दाहिने मुंह हाथी।

पृष्ठ. 'श्री हर्षदेव'।

AV. वजन : ७१.८ ग्रेन = ४.६५ ग्राम (क. कामेइ. पृ० ३६, फलक ५, २३।

२४. वही : जगदेव § ११२

अग्र. खड़ा राजा।

पृष्ठ. बैठी देवी; बायें 'ज'; दाहिने 'ग'।

Æ. [तुकी. क. कामेइ. पृ० ४६, फलक ५. ३२।

फलक ५



फलक ५

१. नेपाल : अंशुवर्मन् § ११३

अग्र. 'कामदेहा'; बायें मुँह गाय।

पृष्ठ. 'श्रयंशुवर्म'; बायें मुँह पंखयुक्त अश्व।

Æ. [तुकी. क. काऐइ. पृ० ११६, फलक १३, ४।

२. पद्मावती के नाग : गणपति नाग ≥ १०१

अग्र. बायें मुँह वृषभ।

पृष्ठ. 'श्री गणपत्यु'।

Æ. [क. कामेइ. पृ० २४, फलक २, २१।

३. हूण : फीरूज के शासनकाल (४७१–४८६ ई०) के उत्तरार्ध में ससेनियन मुद्राशैली से अनुकृत ≥ १०५।

अग्र. दाहिने मुँह राजा का सर।

पृष्ठ. अग्नि-वेदिका; ऊपर बायें बालचन्द्रमा; ऊपर दाहिने तारा।

AR. वजन ६१ ग्रेन = ३. ९५ ग्राम [क. कामेइ. फलक ६, १३; और हॉर्नले, जबंसो. १८९०, पृ० १६८।

४. गधिया पैसा ≥ १२२ (२)

अग्र. दाहिने मुँह राजा का सर।

पृष्ठ. अग्नि-वेदिका।

AR. वजन : ६१ ग्रेन = ३.९५ ग्राम [तुकी. क. कामेइ. पृ० ५०, फलक ६, ७।

५. कन्नौज : श्रीमद् आदिवराह, भोजदेव ≥ ११०

अग्र. दाहिने मुँह वराहावतार में विष्णु।

पृष्ठ. 'श्रीमद् आदिवराह'; नीचे अग्निवेदिका के चिह्न।

AR. वजन ६२ ग्रेन=४.०१ ग्राम [क. कामेइ. पृ० ५४, फलक ६. २०।

६. गन्धार के शाहि : स्पलपतिदेव ≥ ११६।

अग्र. दाहिने मुँह अश्वारोही; पीछे 'गु'; सामने अपठित अक्षरों में लेख (तूर्की)।

पृष्ठ. 'श्री स्पलपति देव'; बायें मुँह झुका वृषभ।

AR. वजन ५०.६ ग्रेन = ३.२७ ग्राम [तुकी. क. कामेइ. पृ० ६३, फलक ७, ६।

७. डहाल के कलचुरि : गांगेयदेव ≥ ११६

अग्र. सामने मुँह बैठी चतुर्भुज देवी।

पृष्ठ. 'श्रीमद् गाङ्गेयदेव'।

AV. वजन : ६२ ग्रेन = ४.०१ ग्राम [क. कामेइ. पृ० ८२, फलक ८, १।

८. महाकोशल के कलचुरि : जाजलदेव ≥ ११७

अग्र. सिंह (?) दाहिने मुँह।

पृष्ठ. 'श्रीमज् जाजलदेव'।

AV. वज़न : ६७.५ ग्रेन = ३.७३ ग्राम [क. कामेइ. पृ० ७६, फलक ८, ९।

९. जेजाहुति अथवा महोबा के चन्देल : हल्लक्षणवर्मन् ≥ ११८

अग्र. सामने मुँह बैठी चतुर्भुज देवी।

पृष्ठ. 'श्रीमद् हल्लक्षणवर्म देव'।

AI. वजन : ६३ ग्रेन = ४.०८ ग्राम [क. कामेइ. पृ० ७९, फलक ८, १४।

१०. पाण्ड्य § १२४

अग्र. छत्र के नीचे दो मछलियाँ; दाहिने दीपक; बायें चौरि।

पृष्ठ. लेख जिसे निश्चित रूप से पढ़ा नहीं जा सका है।

AV. वजन : ५७ ग्रेन = ३.६९ ग्राम [इकासइ. पृ० १५२F; फलक ३, १२९।

११. केरल § १२५ (२)

अग्र. अपठित नाम।

पृष्ठ. 'श्री वीरकेरलस्य'।

AR. वजन : ३६.३ ग्रेन=२.३५ ग्राम [अप्रकाशित।

१२. कोङ्गुदेश ≥ १२५ (१)

अग्र. दाहिने मुँह हाथी।

पृष्ठ. पुष्प अलंकरण

AV. वजन : ६०.२ ग्रेन = ३.९ ग्राम [तुकी. इकासइ. पृ० १५२F; फलक ३, ११९।

१३. चोल § १२६

अग्र. दाहिने मुँह छत्र के नीचे बैठा सिंह, जिसके सामने दो मछलियाँ हैं।

पृष्ठ. 'उत्तमचोल'।

AR. वजन : ६२.६ ग्रेन = ४.०५ ग्राम [इकासइ. पृ० १५२G; फलक ३, १५४।

१४. वही : राजराज § १२६

अग्र. खड़ा राजा।

पृष्ठ. 'राजराज'; बैठी देवी।

Æ. [तुकी. इकासइ. पृ० १५२; फलक ४,१६६

१५. लङ्का : पराक्रमबाहु ⅄ १२७

अग्र. खड़ा राजा।

पृष्ठ. 'पराक्रमबाहु'; बैठी देवी।

Æ. [तुकी. रिडे. ऐकासी. पृ० २५, फलक ५।

१६. पल्लव ⅄ १२८

अग्र. आधार पर एक पात्र।

पृष्ठ. दाहिने मुँह सिंह।

AR. वजन : १०३.९ ग्रेन = ६.७३ ग्राम [इकासइ. पृ० १५२ B; फलक २, ४९।

१७. पश्चिमी चालुक्य ⅄ १२९

अग्र. दाहिने मुँह वराह जिसके चारों ओर विभिन्न पञ्चमार्क प्रतीक हैं।

AV. वजन : ५७.२ ग्रेन = ३.७ ग्राम [इकासइ. पृ० १५२, फलक १, १९।

१८. कदम्ब : पद्म-टङ्क ⅄ १३१

अग्र. कमल जिसके चारों ओर पञ्चमार्क प्रतीक तथा लेख हैं।

AV. वजन ५७ ग्रेन = ३.६९ ग्राम [तुकी. इकासइ. पृ० १५५, फलक १, ८।

१९. पूर्वी चालुक्य : राजराज § १३०

अग्र. दाहिने मुँह वराह; 'श्री राजराज स(म्वत्) ३५।

AV. वजन : ६६.८ ग्रेन = ४.३२ ग्राम [तुकी. हुल्श, इऐ. १८९६, पृ० ३२१।

शब्दानुक्रमणिका

6902
Gen->Dev.
RAM

